दृष्टि
The Vision

एडिटोरियल

(संग्रह)

नवंबर भाग-1
2021

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
फोन: 8750187501
ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **5**

- जमानत बॉक्स जारी करना 5
- मात्रात्मक डेटा के आधार पर आरक्षण 7

आर्थिक घटनाक्रम **9**

- नए ऊर्जा मंत्रालय की आवश्यकता 9
- रेनफेड फार्मिंग: चुनौतियाँ और संभावनाएँ 11
- अनौपचारिक क्षेत्र का औपचारीकरण 13

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **16**

- यूरेशिया के प्रति भारतीय दृष्टिकोण 16

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी **19**

- इलेक्ट्रिक वाहन: भविष्य का परिवहन 19
- भविष्य के लिये 5G टेक्नोलॉजी 21

नोट :

दृष्टि The Vision

पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण **24**

➢ कार्बन तटस्थता: भारत का लक्ष्य 24

➢ जलवायु लक्ष्य और परिवहन उत्सर्जन 26

सामाजिक न्याय **29**

➢ नशीली दवाओं के दुरुपयोग के विरुद्ध नीतिगत कार्रवाई 29

आंतरिक सुरक्षा **32**

➢ भारत की पनडुब्बी क्षमता 32

दृष्टि The Vision

नोट :

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

जमानत बॉक्स जारी करना

हाल ही में शाहरुख खान के बेटे आर्यन खान की गिरफ्तारी के बाद हुई आपराधिक कार्यवाही को लोगों ने दिलचस्पी से देखा। अंतत: जब बॉम्बे हाई कोर्ट ने आर्यन को जमानत दे दी, तो लाखों भारतीयों को पता चला कि अदालत द्वारा जमानत दे देने से आरोपी को तत्काल रिहाई का अधिकार नहीं मिल गया, बल्कि उसे तब तक प्रतीक्षा करनी थी जब तक कि जमानत आदेश को आर्थर रोड जेल के बाहर भौतिक रूप से स्थापित एक लेटरबॉक्स में जमा नहीं कर दिया गया।

इस बॉक्स को दिन में चार बार खोला जाता है और चूँकि खान के वकील अंतिम डेडलाइन से चूक गए थे, शाहरुख के बेटे को जेल में एक अतिरिक्त रात बितानी पड़ी। लोग इस बात हैरान हैं कि एक "बेल बॉक्स" जेल और किसी भारतीय नागरिक की स्वतंत्रता के बीच इस प्रकार बाधा बन सकता है।

इस संदर्भ में नियमों एवं आपराधिक न्याय प्रणाली पर पुनर्विचार करने और न्यायपालिका प्रणाली में प्रौद्योगिकी को अपनाने की आवश्यकता है।

अब तक की गई पहल :

- सर्वोच्च न्यायालय की ई-समिति के अध्यक्ष न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड़ ने एक सार्वजनिक कार्यक्रम में टिप्पणी की थी कि जमानत आदेशों को संप्रेषित करने में होने वाली देरी को शीघ्रातिशीघ्र संबोधित किया जाना चाहिये।
- इस संबंध में, हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों ने जमानत मिलने के बाद भी कैदियों की रिहाई न होने के विषय का स्वत: संज्ञान लिया था और फास्ट एंड सिक्योर्ड ट्रांसमिशन ऑफ इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड (FASTER) सिस्टम के निर्माण का निर्देश दिया था, जो ड्यूटी धारकों तक अंतरिम आदेश, स्थगन आदेश, जमानत आदेश और कार्यवाही रिकॉर्ड की ई-सत्यापित प्रतियाँ प्रसारित करेगी।
- अदालत इस तथ्य पर पूर्णत: मौन रही कि वर्ष 2014 में प्रकाशित ई-कोर्ट परियोजना के लिये द्वितीय चरण के दस्तावेज़ ने आपराधिक न्याय प्रणाली में प्रमुख संस्थानों के बीच सूचना के प्रसारण की अनुमति देने के लिये एक महत्त्वाकांक्षी (लेकिन अब तक अपूर्ण) योजना की घोषणा की थी।
- ताज़ा मामले में "बेल-जेल" कनेक्टिविटी का विषय ई-समिति—जो ई-कोर्ट परियोजना संचालन के लिये उत्तरदायी है, की संरचना, प्रबंधन और उत्तरदायित्व में एक अधिक गहरी समस्या को इंगित करता है।

ई-कोर्ट परियोजना संबंधी मुद्दे:

- परियोजना के प्रथम और द्वितीय चरण के लिये सरकार द्वारा क्रमश: 935 करोड़ रुपये तथा 1,670 करोड़ रुपये के बजट को मंजूरी दी गई थी एवं सर्वोच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश की अध्यक्षता वाली ई-समिति को तय करना था कि इस राशि को कैसे खर्च किया जाये। परंतु फिर भी उपलब्धियों के मामले में अपेक्षाकृत कम प्रगति ही नज़र आती है।
- कई न्यायालयों के पास कंप्यूटर सुविधा उपलब्ध है और इसके माध्यम से आम नागरिकों के लिये 'केस इन्फॉर्मेशन' प्राप्त करना आसान होता है, फिर भी ऐसे क्या कारण हैं कि अदालतों और जेलों के बीच आदेशों के इलेक्ट्रॉनिक प्रसारण जैसे बुनियादी कार्यकरण का विषय ई-समिति के ध्यान में नहीं आया, जबकि इसका उल्लेख स्वयं उसके दृष्टिकोण पत्र में मौजूद था?
- संभवत: इसलिये क्योंकि ई-समिति को किसी के प्रति जवाबदेह नहीं बनाया गया है। इसके द्वारा पर्याप्त मात्रा में सार्वजनिक धन का उपयोग किये जाने के बावजूद, न तो नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG) ने और न ही लोकसभा की लोक लेखा समिति (PAC) ने ई-कोर्ट परियोजना के संचालन की समीक्षा की है।

नोट :

- विधि और न्याय मंत्रालय के अंतर्गत कार्यरत न्याय विभाग (DoJ) ने विधि और न्याय संबंधी संसदीय स्थायी समिति के अतिरिक्त दबाव के बाद इस परियोजना के दो बेहद कमज़ोर मूल्यांकन प्रस्तुत किये।
- इस तरह की जटिल परियोजना को कम से कम सार्वजनिक समीक्षा या निष्पादन लेखापरीक्षा के अधीन होना चाहिये। ये सार्वजनिक जवाबदेही और परियोजना प्रबंधन की बुनियादी बातें हैं।

न्यायपालिका में प्रौद्योगिकी के प्रयोग:

- लागत में वृद्धि: ई-कोर्ट लागत-गहन भी साबित होंगे क्योंकि अत्याधुनिक ई-कोर्ट स्थापित करने के लिये आधुनिक प्रौद्योगिकियों की तैनाती की आवश्यकता होगी।
- हैकिंग और साइबर सुरक्षा: प्रौद्योगिकी के उपयोग में साइबर सुरक्षा चिंता का एक प्रमुख विषय है। सरकार ने इस समस्या के समाधान के लिये उपचारात्मक कदम उठाये हैं और साइबर सुरक्षा रणनीति तैयार की है, लेकिन यह अभी केवल निर्धारित दिशानिर्देशों तक सीमित है। इसका व्यावहारिक और वास्तविक कार्यान्वयन देखा जाना अभी शेष है।
- आधारभूत संरचना: अधिकांश तालुकाओं/ग्रामों में अपर्याप्त अवसंरचना और विद्युत् एवं इंटरनेट कनेक्टिविटी की अनुपलब्धता जैसे कारणों से इस उद्देश्य की पूर्ति के समक्ष चुनौतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।
  - हर क्षेत्र, हर वर्ग तक समान रूप से न्याय की पहुँच के लिये इंटरनेट कनेक्टिविटी और कंप्यूटर के साथ विद्युत् कनेक्शन का होना आवश्यक है।
- ई-कोर्ट रिकॉर्ड का रखरखाव: पैरा-लीगल कर्मियों के पास दस्तावेज़ या रिकॉर्ड साक्ष्य के प्रभावी रखरखाव और उन्हें वादी तथा कौंसिल के साथ-साथ न्यायालय के लिये आसानी से उपलब्ध करा सकने के लिये पर्याप्त प्रशिक्षण एवं सुविधाओं का अभाव है।
- दस्तावेज़ या रिकॉर्ड साक्ष्य तक आसान पहुँच का अभाव अन्य विषयों के साथ ही न्यायिक प्रक्रिया के प्रति वादी के भरोसे को कम कर सकता है।

आगे की राह:

- असमान डिजिटल पहुँच की समस्या को संबोधित करना: जबकि देश में मोबाइल फोन का व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है, इंटरनेट तक पहुँच शहरी उपयोगकर्त्ताओं तक ही सीमित रही है।
- अवसंरचना की कमी: न्याय के वितरण में 'ओपेन कोर्ट' एक प्रमुख सिद्धांत या शर्त है। सार्वजनिक पहुँच के प्रश्न को दरकिनार नहीं किया जा सकता, बल्कि यह केंद्रीय विचार का विषय होना चाहिये।
  - प्रौद्योगिकीय अवसंरचना की कमी का प्राय: यह अर्थ होता है कि ऑनलाइन सुनवाई तक पहुँच कम हो जाती है।
- रिक्तियों को भरना: जिस तरह डॉक्टरों को किसी भी स्तर के उन्नत चैटबॉट्स या प्रौद्योगिकी द्वारा प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता, वैसे ही न्यायाधीशों का कोई विकल्प नहीं है और उनकी भारी कमी बनी हुई है।
  - इंडिया जस्टिस रिपोर्ट 2020 के अनुसार, उच्च न्यायालय में 38% (2018-19) और इसी अवधि में निचली अदालतों में 22% रिक्तियाँ थीं।
  - अगस्त 2021 तक की वस्तुस्थिति के अनुसार, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के प्रत्येक 10 में से चार से अधिक पद रिक्त बने हुए हैं।
- न्यायाधीशों की जवाबदेही: समाधान न्यायाधीशों से उत्तरदायित्व की माँग में निहित है जो प्रशासनिक रूप से जटिल परियोजनाओं (जैसे ई-कोर्ट) का संचालन स्वयं करने पर बल तो देते हैं, लेकिन इसके लिये वे प्रशिक्षित नहीं हैं और उनके पास आवश्यक कौशल की कमी होती है।
- एक अन्य पहलू जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है वह है एक सुदृढ़ सुरक्षा प्रणाली की तैनाती जो उपयुक्त पक्षों के लिये केस इन्फोर्मेशन तक सुरक्षित पहुँच प्रदान करे। ई-कोर्ट अवसंरचना और प्रणाली की सुरक्षा सर्वोपरि है।
- इसके अलावा उपयोगकर्त्ता-अनुकूल ई-कोर्ट तंत्र का विकास किया जाना चाहिये जो आम जनता के लिये सरलता और आसानी से अभिगम्य हो। यह वादियों को भारत में ऐसी सुविधाओं का उपयोग करने के लिये प्रोत्साहित करेगा।

नोट :

निष्कर्ष

यह उपयुक्त समय है कि दीर्घकालिक और स्थायी परिवर्तन लाया जाए जो भारत की चरमराती न्याय वितरण प्रणाली को रूपांतरित करे।

लेकिन प्रौद्योगिकी पर आवश्यकता से अधिक निर्भरता न्यायालयों की सभी समस्याओं के लिये एकमात्र रामबाण उपचार नहीं हो सकती और अगर अधिक विचार-विमर्श के बिना इस ओर कदम बढ़ाया गया तो यह प्रतिकूल परिणाम भी उत्पन्न कर सकता है।

मात्रात्मक डेटा के आधार पर आरक्षण

संदर्भ

मद्रास उच्च न्यायालय के हालिया निर्णय, जिसके तहत अत्यंत पिछड़े वर्गों (Most Backward Classes- MBC) और विमुक्त समुदायों (Denotified Communities- DNC) के लिये समग्र रूप से 20% आरक्षण में से वन्नियाकुला क्षत्रियों को दिये गए 10.5% विशेष आरक्षण को रद्द कर दिया गया था, के कारण एक बार फिर शिक्षा और रोज़गार में आरक्षण के लिये मात्रात्मक आँकड़ों की उपलब्धता के महत्त्व पर प्रकाश पड़ा है।

वर्ष 2020 में तमिलनाडु सरकार ने विशेष कोटा कानून पारित किया था, जिसे मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और उच्च न्यायालय ने इसे असंवैधानिक करार दिया था।

तमिलनाडु के महाधिवक्ता (एडवोकेट जनरल) ने सरकार का पक्ष रखते हुए इस बात पर विशेष बल दिया था कि इस कानून को द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग द्वारा प्रदत्त MBCs और DNCs के पर्याप्त सत्यापित जनसंख्या आँकड़े के आधार पर अधिनियमित किया गया है, लेकिन न्यायालय ने माना कि कानून लाने के लिये राज्य सरकार के पास बेहद कम मात्रात्मक आँकड़े मौजूद थे।

इस संदर्भ में आरक्षण की बारीकियों और मौजूदा आँकड़ों की कमी पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है।

आरक्षण की आवश्यकता

- देश में पिछड़ी जातियों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने हेतु।
- पिछड़े वर्गों के लिये प्रगति का समान अवसर प्रदान करने हेतु, क्योंकि वे उन समूहों के साथ सामान्य रूप से प्रतिस्पर्द्धा नहीं कर सकते जिनकी सदियों से संसाधनों और साधनों तक सामान्य पहुँच रही है।
- राज्य के अधीन सेवाओं में पिछड़े वर्गों के पर्याप्त प्रतिनिधित्व की सुनिश्चितता के लिये।
- पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिये।
- समानता को योग्यता तंत्र (Meritocracy) का आधार बनाने के लिये; अर्थात योग्यता के आधार पर अवसरों के निर्धारण से पहले सभी व्यक्तियों को एकसमान स्तर पर लाया जाना आवश्यक है।

आरक्षण के लाभ

- यह उच्च शिक्षा में विविधता सुनिश्चित करता है, कार्यस्थल पर समानता लाता है और पिछड़े वर्गों की घृणा या द्वेष से सुरक्षा प्रदान करता है।
- यह वंचित व्यक्तियों के उद्धार में मदद करता है और इस प्रकार समानता को बढ़ावा देता है।
- यह जाति, धर्म और जातीयता के संबंध में विद्यमान रूढ़ियों को समाप्त करता है।
- यह सामाजिक गतिशीलता की वृद्धि करता है।
- सदियों के उत्पीड़न एवं भेदभाव की भरपाई करने और समान अवसर प्रदान करने हेतु यह काफी महत्त्वपूर्ण है।
- यह 'वर्गीकृत असमानताओं' को संबोधित कर समाज में समानता लाने का प्रयास करता है।

आरक्षण के दोष

- ऐसी चिंताएँ प्रकट की जाती हैं कि आरक्षण योग्यता के क्षरण की ओर ले जाता है।
- कई जानकार मानते हैं कि आरक्षण व्यवस्था रूढ़ियों को सुदृढ़ बनाता है, क्योंकि आरक्षण के माध्यम से प्राप्त वंचित वर्गों की उपलब्धियों को नीची नज़रों से देखा जाता है।

- आरक्षण के दायरे में आने वाले लोगों की सफलता को उनकी योग्यता और श्रम के बजाय आरक्षण का परिणाम बताया जाता है।
- ऐसी चिंताएँ भी प्रकट की जाती हैं कि आरक्षण 'प्रतिलोम विभेदन' (Reverse Discrimination) के एक माध्यम के रूप में कार्य कर सकता है।
  - 'प्रतिलोम विभेदन' किसी अल्पसंख्यक या ऐतिहासिक रूप से वंचित समूह के सदस्यों के पक्ष में प्रभुत्वशाली या बहुसंख्यक समूह के सदस्यों के साथ भेदभाव का दृष्टिकोण है।
- गुज़रते समय के साथ भेदभावजनक विषयों में कमी आने के बावजूद, वोट बैंक की राजनीति के कारण आरक्षण व्यवस्था को समाप्त करना कठिन है।

संबद्ध मुद्दे

- विस्तृत अध्ययन का अभाव: यह एक तथ्य है कि तमिलनाडु के द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग (जिसे इसके अध्यक्ष जे.ए. अंबाशंकर के नाम से भी जाना जाता है) द्वारा इसके कार्यकाल (1982-1985) में किये गए अध्ययन के बाद से शिक्षा और रोज़गार के विषय में विभिन्न समुदायों के प्रतिनिधित्व के संबंध में मात्रात्मक आँकड़े के संग्रह के लिये कोई भी विस्तृत अध्ययन नहीं किया गया है।
- आंतरिक आरक्षण: आंतरिक आरक्षण की आवश्यकता एक से अधिक कारणों से महसूस की गई है। यह पाया गया है कि समुदायों के कुछ वर्ग अन्य की तुलना में अधिक पिछड़े हुए हैं।
  - आरक्षण में 'क्रीमीलेयर' की अवधारणा लागू न होने से स्थिति और भी विकट हो गई है।

आगे की राह

- वर्ष 1992 के निर्णय की समीक्षा करना: सर्वोच्च न्यायालय को एक कदम आगे बढ़ते हुए इंदिरा साहनी मामले की पुनर्समीक्षा करनी चाहिये ताकि उच्च न्यायालयों द्वारा दिये गए विभिन्न निर्णयों के कारण उत्पन्न हुई समस्याओं को संबोधित किया जा सके।
  - आरक्षण व्यवस्था का उद्देश्य जाति आधारित जनगणना में हाशिये पर स्थित समूहों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार लाना होना चाहिये।
- संघीय ढाँचे को बनाए रखना: आरक्षण के मुद्दे पर विचार करते समय यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि विभिन्न समुदायों को आरक्षण प्रदान करने में राज्य सरकार संघीय ढाँचे को अक्षुण्ण बनाए रख रहे हैं या उसे नष्ट कर रहे हैं।
  - संविधान के अनुच्छेद 341 और अनुच्छेद 342 के तहत, किसी समुदाय विशेष को अनुसूचित जाति (SC) या अनुसूचित जनजाति (ST) घोषित करना संसद में निहित शक्ति है।
- आरक्षण और योग्यता के बीच संतुलन रखना: समुदायों को आरक्षण देते समय प्रशासन की दक्षता को ध्यान में रखना भी आवश्यक है।
  - सीमा से अधिक आरक्षण योग्यता की अनदेखी करेगा, जो फिर समग्र प्रशासन को कमज़ोर कर सकता है।
  - आरक्षण का एकमात्र उद्देश्य वंचित समुदायों के साथ किये गए ऐतिहासिक अन्याय के मुद्दे को संबोधित करना है, लेकिन एक निश्चित बिंदु से परे योग्यता की भी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये।
- पिछड़ों को न्याय, अगड़ों के लिये समानता और समग्र व्यवस्था के लिये दक्षता के बीच संतुलन के लिये एक मज़बूत राजनीतिक इच्छाशक्ति अनिवार्य है।

निष्कर्ष

आरक्षण समाज के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के लाभ के लिये उपयुक्त सकारात्मक भेदभाव करता है। आरक्षण यह सुनिश्चित करने में मदद करता है कि समाज के सबसे पिछड़े सदस्यों को इसका लाभ मिले।

आर्थिक घटनाक्रम

नए ऊर्जा मंत्रालय की आवश्यकता

संदर्भ

इस माह के आरंभ में कोयले की कमी से संबंधित विभिन्न कारणों को लेकर विशेषज्ञों के बीच मतभेद हो सकते हैं, लेकिन वे सभी इस बात पर सहमत होंगे कि इसका दोष किसी एक संस्था या मंत्रालय पर नहीं लगाया जा सकता है। हालाँकि, कोयला मंत्रालय और 'कोल इंडिया' को निश्चित रूप से यह स्वीकार करना चाहिये कि कहीं न कहीं उनसे चूक हुई है—यह चूक उत्पादन प्रक्रिया के प्रबंधन में हुई हो या आपूर्ति की योजना तैयार करने में या महत्त्वपूर्ण नेतृत्वकारी पदों को रिक्त बनाए रखने में। बिजली मंत्रालय/एनटीपीसी और बिजली वितरण कंपनियों को भी अपना उत्तरदायित्व स्वीकार करना चाहिये।

केंद्र या राज्य सरकार के स्तर पर कोई एक विशिष्ट सार्वजनिक निकाय मौजूद नहीं है जिसके पास पूरी कोयला मूल्य श्रृंखला के लिये कार्यकारी निरीक्षण की शक्ति, उत्तरदायित्व एवं जवाबदेही हो। यह एक उल्लेखनीय कमी है, जो संपूर्ण ऊर्जा क्षेत्र को प्रभावित करती है। न केवल एक और कोयला संकट की पुनरावृत्ति को रोकने के लिये बल्कि देश की अपनी 'हरित' महत्त्वाकांक्षा को साकार करने के लिये इस कमी को दूर किये जाने की आवश्यकता है।

ऊर्जा सुरक्षा का महत्त्व

- ऊर्जा सुरक्षा का अर्थ है उचित मूल्य पर आवश्यक मात्रा और गुणवत्ता के साथ ऊर्जा की विश्वसनीय आपूर्ति और ऊर्जा संसाधनों एवं ईंधन तक पहुँच। ऊर्जा सुरक्षा कई कारकों पर निर्भर करती है।
- ऊर्जा सामग्री आयात करने वाले देशों के लिये ऊर्जा सुरक्षा की परिभाषा में मुख्य रूप से तीन पहलू शामिल हैं:
  - ऊर्जा संसाधनों की पर्याप्त मात्रा तक पहुँच,
  - उपयुक्त प्रारूप,
  - पर्याप्त मूल्य।
- भारत अपनी तेल आवश्यकताओं के 80% का आयात करता है और समग्र विश्व में तीसरा सबसे बड़ा तेल उपभोक्ता है।
- भारत की ऊर्जा खपत अगले 25 वर्षों तक प्रत्येक वर्ष 4.5% की दर से बढ़ने की उम्मीद है।
- हाल में, कच्चे तेल के उच्च अंतर्राष्ट्रीय मूल्यों के कारण तेल आयात पर उच्च लागत से चालू खाता घाटे (CAD) में वृद्धि हुई है, जिससे भारत में दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता के बारे में चिंता उत्पन्न हुई और इस परिदृश्य ने ऊर्जा सुरक्षा के महत्त्व को रेखांकित किया।

भारत में ऊर्जा सुरक्षा की चुनौतियाँ

- नीतिगत चुनौतियाँ: घरेलू हाइड्रोकार्बन अन्वेषण में अंतर्राष्ट्रीय निवेश आकर्षित करने में विफलता।
  - भारत में कोयला खनन नियामक और पर्यावरण मंजूरी के कारण देरी की समस्या से ग्रस्त है।
  - नीति आयोग ने एक ऊर्जा रणनीति तैयार की है, लेकिन इसके पास कोई कार्यकारी अधिकार नहीं है। वर्ष 2006 में पूर्ववर्ती योजना आयोग द्वारा प्रकाशित "एकीकृत ऊर्जा नीति" को भी इसी स्थिति का सामना करना पड़ा था।
  - तब, योजना आयोग के दस्तावेज़ को मंत्रिमंडल ने समर्थन तो प्रदान किया था, लेकिन उसकी अधिकांश अनुशंसाओं की अनदेखी कर दी गई थी।
- अभिगम्यता या पहुँच संबंधी चुनौती: भारत में घरेलू क्षेत्र, ऊर्जा के सबसे बड़े उपभोक्ताओं में से एक है। यह कुल प्राथमिक ऊर्जा उपयोग के लगभग 45% के लिये उत्तरदायी है। ग्रामीण क्षेत्रों में खाना पकाने के लिये कुल प्राथमिक ईंधन खपत का 90% बायोमास से प्राप्त होता है। इसका ग्रामीण लोगों पर गंभीर स्वास्थ्य प्रभाव पड़ता है।

नोट :

- अवसंरचना और कौशल संबंधी चुनौतियाँ: परंपरागत और गैर-परंपरागत ऊर्जा के विकास के लिये कुशल श्रमबल का अभाव है और आधारभूत संरचनाएँ पर्याप्त गुणवत्तायुक्त नहीं हैं।
    - भारत में ऊर्जा को सुलभ बनाने के लिये परिवहन अवसंरचना की कमी है। उदाहरण के लिये, भारत में पाइपलाइन अवसंरचना की कमी है, जो देश में गैस की कुल आपूर्ति को बढ़ावा देने के लिये एक उपयोगी माध्यम हो सकता था। भारतीय ऊर्जा मिश्रण में गैस एक प्रमुख भूमिका निभाएगी, क्योंकि इसका उपयोग कई क्षेत्रों में प्रभावी ढंग से किया जा सकता है।
- आर्थिक चुनौतियाँ: कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस भारत में प्राथमिक ऊर्जा के सबसे महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। इन हाइड्रोकार्बन की अपर्याप्त घरेलू आपूर्ति, देश को अपना आयात बिल बढ़ाने के लिये विवश कर रही है।
    - बढ़ती ईंधन सब्सिडी अर्थव्यवस्था के लिये कठिन परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है।
- बाह्य चुनौतियाँ: भारत की कमज़ोर ऊर्जा सुरक्षा आयातित तेल पर बढ़ती निर्भरता, नियामक अनिश्चितता, अंतर्राष्ट्रीय एकाधिकारवादी प्रवृत्तियों और अपारदर्शी प्राकृतिक गैस मूल्य निर्धारण नीतियों के कारण गंभीर दबाव में है।
    - दक्षिण-एशिया में अपनी कठिन भौगोलिक स्थिति के मद्देनज़र भारत को अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये एक रणनीतिक चुनौती का सामना करना पड़ रहा है।
    - प्राकृतिक गैस की सुनिश्चित आपूर्ति के लिये IPI (ईरान-पाकिस्तान-भारत) गैस पाइपलाइन और TAPI (तुर्कमेनिस्तान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और भारत) गैस पाइपलाइन में सभी इच्छुक पार्टियों को एक साथ लाने में विफलता हीमिली है।

आगे की राह

ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु निम्नलिखित कदम उठाए जा सकते हैं—

- विधायी कार्रवाई: सरकार को उत्तरदायित्व और सुरक्षा पर बल रखते हुए एक अधिनियम पारित करना चाहिये जिसे "ऊर्जा उत्तरदायित्व और सुरक्षा अधिनियम" का नाम दिया जा सकता है।
    - इस अधिनियम द्वारा ऊर्जा को संवैधानिक मान्यता प्रदान कर ऊर्जा के महत्त्व को बढ़ावा देना चाहिये। इसे नागरिकों को सुरक्षित, सस्ती और स्वच्छ ऊर्जा उपलब्ध कराने के भारत के उत्तरदायित्व को विधिक दायरे में शामिल कर देना चाहिये, और इस संदर्भ में इसे ऊर्जा स्वतंत्रता, ऊर्जा सुरक्षा, ऊर्जा दक्षता और "हरित" ऊर्जा की उपलब्धि की दिशा में प्रगति की निगरानी के लिये मापन योग्य मीट्रिक्स तैयार करना चाहिये।
    - संक्षेप में, यह अधिनियम एक एकीकृत ऊर्जा नीति के निर्माण और निष्पादन के लिये संवैधानिक अधिदेश और ढाँचा प्रदान करेगा।
- संस्थागत कार्रवाई: सरकार को ऊर्जा संबंधी निर्णय-निर्माण की मौजूदा संरचना को नया स्वरूप प्रदान करना चाहिये। इस संदर्भ में, पेट्रोलियम, कोयला, नवीन एवं नवीकरणीय और बिजली मंत्रालयों के मौजूदा 'वर्टिकल साइलो' (परस्पर संवाद या अंतर्क्रिया की अक्रियता) की निगरानी के लिये एक सर्वव्यापक ऊर्जा मंत्रालय के निर्माण को प्राथमिकता दी जा सकती है।
    - ऐसा एक मंत्रालय 1980 के दशक के आरंभ में मौजूद था (यद्यपि इसमें पेट्रोलियम विषय शामिल नहीं था)। इस नए मंत्रालय के प्रभारी मंत्री को रक्षा, वित्त, गृह और विदेश मामलों के मंत्रियों के समान महत्त्व दिया जाना उपयुक्त होगा।
    - प्रधानमंत्री कार्यालय के अंदर एक कार्यकारी विभाग की स्थापना भी की जा सकती है। इसे "ऊर्जा संसाधन, सुरक्षा और संवहनीयता विभाग" के रूप में संदर्भित किया जा सकता है।
    - इसका उद्देश्य उन सभी मुद्दों की पहचान करना और उनका प्रबंधन करना होगा जो वर्तमान में मौजूदा ढाँचे द्वारा निर्मित अंतरालों में अनदेखी का शिकार होते हैं। यह "इंडिया एनर्जी इंक" के महत्त्व का लाभ उठाने और अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा समुदाय के साथ अपनी संलग्नता में भारत की प्रतिस्पर्द्धात्मकता को अधिकतम करने के लिये एक एकीकृत ऊर्जा नीति के निर्माण और निष्पादन का अवसर देगा।
- वित्तीय कार्रवाई: वित्त तक आसान पहुँच सुनिश्चित किया जाना महत्त्वपूर्ण है और सरकार को स्वच्छ ऊर्जा अनुसंधान एवं विकास तथा नवाचार को बढ़ावा देना चाहिये।
- जन जागरूकता का प्रसार: इसके तहत मौजूदा और उभरते ऊर्जा-संबंधी मुद्दों, विशेष रूप से ग्लोबल वार्मिंग के बारे में जन जागरूकता के प्रसार के लिये संचार रणनीति का समन्वय और कार्यान्वयन करना शामिल होगा।
    - इस विभाग के पास अन्य ऊर्जा विभागों की तुलना में कम अधिकार होगा, लेकिन चूँकि यह प्रधानमंत्री कार्यालय के अंतर्गत स्थापित होगा, वास्तविक रूप से यह सबसे शक्तिशाली कार्यकारी निकाय होगा जो परम उत्तरदायित्व के साथ "हरित संक्रमण" का संचालन करेगा।

निष्कर्ष

पेट्रोलियम, कोयला, नवीकरणीय ऊर्जा और बिजली की देखरेख करने वाले विभिन्न मंत्रालयों की मौजूदा भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों में कोई परिवर्तन लाए बिना एक नया ऊर्जा मंत्रालय उन सभी मुद्दों की पहचान और प्रबंधन में सक्षम होगा जो वर्तमान संरचना द्वारा निर्मित अंतरालों में अनदेखी का शिकार होते हैं।

रेनफेड फार्मिंग: चुनौतियाँ और संभावनाएँ

संदर्भ

इसमें कोई संदेह नहीं कि मानवीय गतिविधियों ने वायुमंडल, महासागरों और भूमि को गर्म करने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है, जिसका उल्लेख हाल की IPCC रिपोर्ट में भी किया गया है। रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत भर में ग्रीष्म लहरों की तीव्रता में वृद्धि होगी, जिसका हमारी कृषि और जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ेगा।

रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि अत्यधिक मानसूनी बारिश के कारण वृष्टि-बहुल बाढ़ों की वृद्धि होगी। ऐसी 'अपेक्षित अनिश्चितता' के साथ चीज़ें सामान्य नहीं रह जाएंगी। व्यापक योजनाबद्धता और प्रयासों के बाद भारत खाद्य सुरक्षा प्राप्त कर पाया था। पोषण सुरक्षा को संबद्ध करते हुए इस खाद्य सुरक्षा की स्थिति बनाए रखना और इसमें सुधार लाना हमारे लिये अनिवार्य है।

भारत में वर्षा आधारित कृषि अथवा 'रेनफेड फार्मिंग' (Rainfed Farming) के तहत एक बड़ा भूभाग शामिल है, और इसलिये देश में कृषि क्षेत्र की बेहतरी सुनिश्चित करने के लिये इस क्षेत्र पर ध्यान देना अनिवार्य है।

वर्षा आधारित कृषि अथवा 'रेनफेड फार्मिंग' और कृषि-पारिस्थितिकी

- देश के वर्षा सिंचित क्षेत्र लगभग 90% बाजरा, 80% तिलहन एवं दलहन और 60% कपास का उत्पादन करते हैं और हमारी लगभग 40% आबादी एवं 60% पशुधन का संपोषण करते हैं।
- ये तथ्य आसन्न जलवायु परिवर्तन के प्रति पहले से मौजूद भेद्यता या अरक्षितता को प्रस्तुत करते हैं। हमारे पास एकमात्र विकल्प यह है जलवायु परिवर्तन के प्रति हम तैयारी रखें, इसके प्रति अनुकूलित हों और इसके शमन का प्रयास करें।
- वर्षा सिंचित क्षेत्र पारिस्थितिक रूप से कमज़ोर हैं और इसलिये जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशीलता रखते हैं, जबकि निर्धन किसानों की एक बड़ी आबादी इस पर निर्भर है। इसके साथ ही, वर्षा सिंचित क्षेत्र बाजरा, दलहन और तिलहन के माध्यम से पोषण सुरक्षा में महत्त्वपूर्ण योगदान करते हैं।
- इन क्षेत्रों की अधिकांश स्थानिक और कृषियोग्य भूमि प्रजातियाँ अल्पकालिक हैं। 'अल्पकालिक' (Ephemerals) शब्द उन सभी पादपों को इंगित करता है जो अल्पकालिक अवधि में अपना जीवन-चक्र पूरा कर लेते हैं और वे वर्षा सिंचित क्षेत्रों में उपजते हैं।
- जब भी वर्षा होती है, सुप्त बीज अंकुरित हो जाते हैं, वे फूल और बीज उत्पन्न करते हैं, और थोड़े समयांतराल में ही अपने बीज का प्रकीर्णन पूरा कर लेते हैं। अधिकांश वर्षा सिंचित फसलों की उत्पादकता सिंचित क्षेत्रों में उसी प्रजाति की उत्पादकता की तुलना में कम होती है और इसलिये रेनफेड फार्मिंग सुधार कार्यक्रमों के अंतर्गत प्रत्यास्थता और बेहतर उत्पादकता पर ध्यान केंद्रित किया जाता है।
- भारत 15 कृषि जलवायु क्षेत्रों वाला एक उपोष्णकटिबंधीय देश है और मुख्य रूप से दक्षिण-पश्चिम मानसून पर निर्भर है।
  - भारत के 329 मिलियन हेक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र में से लगभग 140 करोड़ हेक्टेयर शुद्ध बुवाई क्षेत्र है और इसमें से 70 मिलियन हेक्टेयर वर्षा पर निर्भर है। भारतीय कृषि जोत का औसत आकार लगभग एक हेक्टेयर है।

कृषि पारिस्थितिकी का महत्त्व

- संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) कृषि पारिस्थितिकी (Agro-Ecology) को 'कृषि के प्रति पारिस्थितिक दृष्टिकोण' के रूप में परिभाषित करता है जिसे प्राय: 'लो-एक्सटर्नल-इनपुट फार्मिंग' (Low-External-Input Farming) के रूप में वर्णित किया जाता है। इसके लिये पुनर्योजी कृषि (Regenerative Agriculture) या पर्यावरण अनुकूल कृषि (Eco-Agriculture) जैसे अन्य संज्ञाओं का भी प्रयोग किया जाता है।
  - कृषि पारिस्थितिकी केवल कृषि पद्धतियों का एक समूह भर नहीं है, बल्कि यह सामाजिक संबंधों में परिवर्तन लाने, किसानों को सशक्त बनाने, स्थानीय स्तर पर मूल्य निर्माण और लघु मूल्य शृंखलाओं को विशेष महत्त्व देने पर केंद्रित है।

- यह किसानों को जलवायु परिवर्तन के अनुकूल बनने और प्राकृतिक संसाधनों एवं जैव विविधता के संवहनीय उपयोग और संरक्षण का अवसर देती है।

- सरल शब्दों में, कृषि-पारिस्थितिकी फसल विविधता प्रदान करती है। विश्व में लगभग 30,000 खाद्य-योग्य पादप मौजूद हैं, लेकिन चावल, गेहूँ, मक्का, कसावा, आलू आदि ही विश्व के मुख्य खाद्य आहार बने रहे हैं।
- यह निम्न ऊर्जा बाह्य इनपुट्स, उद्यमों के रूप में कृषि-पारिस्थितिक सेवाओं के विस्तार, बहु-फसलों के माध्यम से लंबे समय तक मृदा के उपयोग, विशिष्ट फसल उत्पादन और क्षेत्रीय बाज़ारों पर लक्षित है।

रेनफेड फार्मिंग की चुनौतियाँ

- बार-बार सूखा और अकाल: सूखा और अकाल भारत में वर्षा आधारित कृषि अथवा 'रेनफेड फार्मिंग' की दो सामान्य विशेषताएँ हैं।
- मृदा क्षरण: 1960 के दशक की हरित क्रांति के बाद से राष्ट्रीय कृषि नीति सिंचाई और उन्नत बीजों, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के गहन उपयोग के माध्यम से फसल उपज को अधिकतम करने की आवश्यकता से प्रेरित रही है।
  - शुष्क क्षेत्रों और रेनफेड फार्मिंग प्रणालियों में मृदा को संरक्षित करने में यह एक बड़ी चुनौती रही है।
- निम्न निवेश क्षमता: भारत में वर्षा सिंचित कृषि में छोटे और सीमांत किसान संलग्न हैं, जो कि 1960-1961 में 62% की तुलना में 2015-2016 में 86% परिचालन जोत के लिये उत्तरदायी थे।
- बदतर बाज़ार संपर्क: अधिकांश ग्रामीण क्षेत्र निर्वाह अर्थव्यवस्था की विशेषता रखते हैं। यहाँ अतिरिक्त कृषि उपज तभी बेची जाती है जब परिवार की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हो गई हो।
  - इसके अलावा, व्यक्तिगत उत्पादन इकाइयाँ (परिवार) स्वतंत्र रूप से संचालित होती हैं जिससे एक कुशल विपणन के लिये उत्पाद को एकत्र करना कठिन हो जाता है।
- जल की कमी वाले क्षेत्रों में भी आमतौर पर इतनी वर्षा प्राप्त हो जाती है कि वर्षा आधारित कृषि प्रणालियों में पैदावार को दोगुना या चौगुना किया जा सकता है। लेकिन वर्षा नियमित रूप से और उपयुक्त समय पर नहीं होती जिससे सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और इस जल का अधिकांश बर्बाद हो जाता है।
  - रेनफेड फार्मिंग के उन्नयन के लिये जल के अलावा मृदा, फसल और खेत प्रबंधन में निवेश के साथ ही बेहतर बुनियादी अवसंरचना और बाज़ारों की भी आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, भूमि एवं जल संसाधनों पर बेहतर और अधिक न्यायसंगत पहुँच और सुरक्षा सुनिश्चित करना होगा।
  - वर्षा सिंचित क्षेत्रों में उत्पादन और इस प्रकार ग्रामीण आजीविका में सुधार के लिये, वर्षा से संबंधित जोखिमों को कम करने की आवश्यकता है। इसका अर्थ यह है कि जल प्रबंधन में निवेश करना रेनफेड फार्मिंग की क्षमताओं को साकार करने के लिये एक आरंभिक कदम होगा।

आगे की राह

- सरकारी सहायता की आवश्यकता: वर्षा सिंचित क्षेत्र और उनके किसान शायद ही योजनाओं से लाभान्वित होते हैं क्योंकि वे कम उर्वरकों और सिंचाई का उपयोग करते हैं और उर्वरक एवं बिजली पर प्रदत्त सब्सिडी का पूरा लाभ नहीं ले पाते।
  - इन क्षेत्रों पर विशेष रूप से नए सिरे से ध्यान देने की ज़रूरत है, विशेषकर जब जलवायु पूर्वानुमान उनके अनुकूल नहीं हैं।
- वर्षा सिंचित क्षेत्रों में कृषि-पारिस्थितिकी की शुरुआत करना एक बेहतर नीति विकल्प हो सकता है। इस तरह के हस्तक्षेपों के 'डिज़ाइन एलिमेंट्स' बीज स्तर से आरंभ होते हुए बाज़ार स्तर तक पहुँचने चाहिये।
  - स्थानिक भूमि नस्लों को संहिताबद्ध करना, उनके बीज एकत्र करना, औपचारिक एवं नागरिक समाज से प्राप्त स्वदेशी ज्ञान का भंडार बनाना, पौधों के चयन या पौधों के प्रजनन के माध्यम से भूमि प्रजातियों में सुधार, कृषि संबंधी अभ्यासों के विकास, क्षेत्र विशिष्ट अभिविन्यास, संस्थान, लिंग, अन्य कार्यक्रमों के साथ अभिसरण, विपणन रणनीतियाँ, माप के लिये मीट्रिक और प्रौद्योगिकी ऐसे कुछ प्रमुख डिज़ाइन एलिमेंट्स हैं।
- पोस्ट-कोविड विश्व में प्रतिरक्षा वृद्धि और निम्न या नगण्य रासायनिक अवशेषों वाले पौष्टिक खाद्य पदार्थों की आवश्यकता है।
  - वर्षा आधारित क्षेत्र इसके स्पष्ट विकल्प हैं और बाज़ारों को कृषि-पारिस्थितिकी के लिये तैयार करना एक अच्छी रणनीति हो सकती है।

- इन पौष्टिक फसलों को प्रभावी ढंग से पकाने के बारे में उपभोक्ता शिक्षण मांग में वृद्धि उत्पन्न कर सकता है। कर्नाटक सरकार द्वारा बाजरा के लिये एक वर्णनात्मक कुकबुक तैयार की गई है।

- इस संबंध में एक अधिक संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता है, ताकि रेनफेड फार्मिंग में संलग्न किसानों को भी उसी स्तर का अनुसंधान और प्रौद्योगिकी फोकस और उत्पादन समर्थन मिल सके, जैसा पिछले कुछ दशकों में सिंचित क्षेत्रों के किसानों को प्राप्त हुआ है।
- रेनफेड फार्मिंग में अधिकाधिक अनुसंधान एवं विकास के साथ ही वर्षा आधारित कृषि क्षेत्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सरकारी योजनाओं में आवश्यक फेरबदल करने जैसे अधिक नीति परिप्रेक्ष्य लाने की तात्कालिक आवश्यकता है।
- दीर्घावधि में पीएम-किसान योजना (अंतरिम बजट 2019 में घोषित) जैसे नकद प्रोत्साहन और आय समर्थन कार्यक्रम व्यापक खरीद से बेहतर साबित हो सकते हैं क्योंकि वे अधिक समावेशी हैं, और किसानो के बीच क्षेत्र या उगाई जाने वाली फसलों के आधार पर विभेद नहीं करते हैं।
- मौजूदा संकट के समय किसानों की मदद करने के लिये आय समर्थन के साथ-साथ, अब यह उपयुक्त समय है कि भविष्य के लिये बेहतर संरचित हस्तक्षेपों को रूपाकार दिया जाए।
- दीर्घावधि में कृषि को आकर्षक बनाने के लिये 'ईज ऑफ डूइंग बिजनेस' की तरह वर्षा सिंचित क्षेत्रों में बीज, मृदा, जल आदि के मापदंडों पर 'ईज ऑफ डूइंग फार्मिंग' को बढ़ावा दिया जा सकता है।

निष्कर्ष

वर्षा सिंचित कृषि का महत्त्व क्षेत्रवार रूप से भले ही भिन्न-भिन्न है, लेकिन विकासशील देशों में वर्षा सिंचित क्षेत्रों में ही निर्धन समुदायों के लिये अधिकांश खाद्य का उत्पादन होता है। यद्यपि सिंचित क्षेत्रों के उत्पादन ने भारतीय खाद्य उत्पादन (विशेषकर हरित क्रांति के दौरान) में अधिक उच्च योगदान किया है, लेकिन वर्षा सिंचित कृषि अभी भी कुल अनाज के लगभग 60% का उत्पादन करती है और एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

इस परिप्रेक्ष्य में, कृषि क्षेत्र को संवहनीय और जलवायु परिवर्तन के लिये प्रतिरोधी बनाने हेतु वर्षा आधारित कृषि पर ध्यान देना अनिवार्य है।

अनौपचारिक क्षेत्र का औपचारीकरण

संदर्भ

यह देश में विमुद्रीकरण (Demonetization) की घोषणा हो या वस्तु एवं सेवा कर (GST) लागू किया जाना हो अथवा कोविड-19 महामारी का प्रकोप हो—इसका प्रमुख असर देश के अनौपचारिक क्षेत्र (Informal Sector) पर पड़ा, जो व्यापक स्तर पर नकद राशि में अपने कार्य करता है और प्राय: किसी नियामक दायरे से बाहर परिचालित होता है। ऐसी स्थिति का प्रमुख लाभार्थी औपचारिक या संगठित क्षेत्र (Formal Sector) रहा, जिसे कई प्रकार के संरक्षण प्राप्त हैं।

एक ऐसे समय में जब ग्रामीण क्षेत्रों में आकस्मिक मज़दूरी (Casual Wages) में वास्तविक गिरावट नज़र आ रही हो, अंधाधुंध मुनाफे से प्रेरित संगठित क्षेत्र की बढ़ती समृद्धि इस बात का प्रतिबिंब है कि भारतीय अर्थव्यवस्था किस प्रकार द्विधारी हो गई है।

चूँकि अनौपचारिक क्षेत्र भारतीय कामगारों की एक बड़ी संख्या के लिये रोज़गार का प्राथमिक प्रदाता है, इसके वर्तमान स्वरूप के शीघ्रातिशीघ्र प्रभावी औपचारीकरण की तत्काल आवश्यकता है।

भारत का अनौपचारिक क्षेत्र

- अनौपचारिक क्षेत्र पर सर्वाधिक प्रभाव: विमुद्रीकरण के बाद ग्रामीण भारत में असंगत रूप से बड़ी संख्या में रोज़गार का सृजन हुआ है।
  - यह तथ्य उतना सकारात्मक नहीं है जितना दिखाई देता है, क्योंकि शहरी भारत की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में मज़दूरी लगभग ढाई गुना कम है। परिणामस्वरूप, अगले कुछ वर्षों में समग्र मज़दूरी स्तर और सकल घरेलू उत्पाद में गिरावट आई।
  - वर्ष 2020 के राष्ट्रीय लॉकडाउन से अनौपचारिक क्षेत्र के श्रमिकों को औपचारिक क्षेत्र के उनके समकक्षों की तुलना में कहीं अधिक नुकसान हुआ है।
    - इस दौरान पर्याप्त सुरक्षा जाल के अभाव में, किसी प्रकार अपने गाँव-घर को लौटने का प्रयास करते विस्थापित अनौपचारिक श्रमिकों के पीड़ाजनक वृतांत देखने-सुनने को मिले।

- गैर-कृषि श्रमिकों की मज़दूरी में गिरावट: अगस्त 2021 में जारी श्रम ब्यूरो के नवीनतम आँकड़ों के अनुसार, पिछले दो वर्षों में गैर-कृषि श्रमिकों की वास्तविक मज़दूरी में 1.6% प्रति वर्ष की गिरावट आई है।
  - कृषि श्रमिकों के लिये इनमें प्रति वर्ष 0.4% की गिरावट आई।
- अर्थव्यवस्था में अनौपचारिक क्षेत्र का संकुचन: भारतीय स्टेट बैंक (SBI) की शोध टीम द्वारा हाल ही में जारी 'इकॉरैप' (Ecowrap) शीर्षक रिपोर्ट में दावा किया गया है कि समग्र अर्थव्यवस्था में अनौपचारिक क्षेत्र की हिस्सेदारी वर्ष 2017-18 में 52% से घटकर वर्तमान में 15-20% रह गई है।
  - सकल मूल्य वर्द्धन (GVA) में हमारे अनौपचारिक क्षेत्र की हिस्सेदारी वर्ष 2019-20 में 44% थी जो वर्ष 2017-18 की तुलना में मामूली वृद्धि को दर्शाती है।
  - 'इकॉरैप' रिपोर्ट के अनुसार, निर्माण एवं आवास तथा खाद्य सेवाएँ एवं व्यापार दो ऐसे क्षेत्र हैं, जिन्होंने अनौपचारिक अर्थव्यवस्था की अपनी हिस्सेदारी में सबसे तेज़ गिरावट देखी है।

संबद्ध समस्याएँ

- अनौपचारिक क्षेत्रों के लिये संकेतकों का अभाव: रियल-टाइम आर्थिक संकेतकों के अभाव से भारत के उस व्यापक अनौपचारिक क्षेत्र की निगरानी करना कठिन हो जाता है, जो लगभग 80% श्रम शक्ति को रोज़गार प्रदान करता है और सकल घरेलू उत्पाद के लगभग 50% का उत्पादन करता है।
- केवल आधिकारिक रिकॉर्ड में पंजीकरण ही पर्याप्त नहीं: महज 'ई-श्रम पोर्टल' पर श्रमिकों का पंजीकरण ही रोज़गार की औपचारिकता का कोई संकेतक नहीं हो सकता, जब तक कि वे पोर्टल पर सूचीबद्ध सभी सामाजिक सुरक्षा लाभ किसी अधिकार के रूप में प्राप्त करने में सक्षम न हो जाएँ।
  - आधिकारिक रिकॉर्ड में डिजिटलीकरण और पंजीकरण बढ़ाना किसी भी उद्यम/कामगार को औपचारिक के रूप में वर्गीकृत करने के लिये न तो आवश्यक शर्त हो सकता है और न ही इतना भर ही पर्याप्त है।
- पंजीकृत अनौपचारिक श्रमिकों की अपर्याप्त मज़दूरी: ई-श्रम पोर्टल पर पंजीकृत श्रमिकों में से 92% की मासिक आय 10,000 रुपए से कम है जो कि अधिकांश राज्यों में अकुशल मैन्युअल श्रमिकों के लिये निर्धारित न्यूनतम वेतन से कम है।
- बेहतर अर्थव्यवस्था के मानकों के संबंध में अस्पष्टता: वास्तविक समस्या यह है कि औपचारिकता को अनिवार्य रूप से अर्थव्यवस्था में सुधार या श्रमिकों की भौतिक स्थिति में सुधार का एक उपाय या समाधान माना जाए या नहीं।
  - हालाँकि, दोनों ही मामलों में अर्थव्यवस्था ने बदतर रोज़गार परिदृश्य, आय में गिरावट और पोषण जैसे मानव-विकास संकेतकों के मामले में असफलताओं के साथ खराब प्रदर्शन किया है।

आगे की राह

- नीति निर्माताओं का दायित्व: अनौपचारिक क्षेत्र के महत्त्व को चिह्नित किया जाना आवश्यक है, जो स्पष्ट रूप से केवल देश की एक बड़ी आबादी को आजीविका प्रदान करने तक ही सीमित नहीं है।
  - नीति निर्माताओं को इस क्षेत्र को उपयुक्त रूप से परिभाषित करना होगा, रोज़गार की सुरक्षा के लिये श्रम कानून लाना होगा, पर्याप्त मज़दूरी प्रदान करनी होगी और औपचारिक क्षेत्र के कामगारों के ही समान अनौपचारिक क्षेत्र के कामगारों को भी देखना होगा।
  - इसके अलावा, अनौपचारिक क्षेत्र से संलग्न लोगों की कार्य परिस्थितियों और कल्याण में सुधार के लिये एक संस्थागत नियामक ढाँचा बनाने की ज़रूरत है।
- बाध्य और नैसर्गिक औपचारीकरण के बीच के अंतर को समझना: 'बाध्य' और 'नैसर्गिक' औपचारीकरण (Forced and Natural Formalisation) के बीच के अंतर को समझा जाना भी महत्त्वपूर्ण है।
  - ऐसा औपचारीकरण जो केवल बाहरी दबाव के कारण घटित होता है या अनौपचारिक क्षेत्र में गहरे संकट की ओर ले जाता है—संवहनीय नहीं हो सकता है।
  - इसके विपरीत, नीति परिवर्तन के माध्यम से किया गया औपचारीकरण, जो समय के साथ 'लघु' और 'अनौपचारिक' फर्मों को 'मध्यम' और 'बड़े' औपचारिक फर्मों में रूपांतरित होने में सहायता दे, अधिक संवहनीय होगा।

नोट :

- अनौपचारिक क्षेत्र को सुरक्षा प्रदान करना: वर्तमान आवश्यकता यह है कि सामाजिक कल्याण योजनाओं के माध्यम से अनौपचारिक क्षेत्र के श्रमिकों को सुरक्षा प्रदान की जाए, ताकि वे जिस व्यवधान का सामना कर सकें।
  - इस दृष्टिकोण से मनरेगा (MGNREGA) योजना जैसे कार्यक्रमों के साथ लंबे समय तक उदार बने रहने की आवश्यकता है।
- एक शहरी समाज कल्याण संरचना की स्थापना: भारत में ग्रामीण सामाजिक कल्याण योजनाओं की तरह की कोई शहरी सामाजिक कल्याण योजना मौजूद नहीं है, जो एक अधिक स्थायी प्रत्यक्ष शहरी सामाजिक कल्याण संरचना स्थापित करने की आवश्यकता पर बल देती है।
  - छोटे व्यवसायों के विकास को सहायता देने वाले सुधारों को बढ़ावा देना भी महत्त्वपूर्ण है। उदाहरण के लिये, विकास कर रहे फर्मों से संबद्ध नियामक बोझ को कम करना लाभदायी हो सकता है।

निष्कर्ष

चूँकि अनौपचारिक क्षेत्र कामकाजी आबादी के एक बड़े हिस्से को आजीविका प्रदान करता है, ऐसे में कार्य परिस्थितियों, रोज़गार अवसरों, मज़दूरी और उनके डेटाबेस के रखरखाव के संबंध में इस क्षेत्र से संलग्न लोगों के उत्थान के लिये कठोर और समयबद्ध उपाय किये जाने की आवश्यकता है।

दृष्टि The Vision

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

यूरेशिया के प्रति भारतीय दृष्टिकोण

संदर्भ

हाल के वर्षों में नई दिल्ली की गहन कूटनीति के परिणामस्वरूप भारत की 'हिंद-प्रशांत रणनीति' को राजनीतिक और संस्थागत सफलता प्राप्त हुई है। हालाँकि, 'हिंद-प्रशांत' (Indo-Pacific) विशिष्ट रूप से समुद्री भू-राजनीति तक सीमित है, जबकि भारत को अपनी महाद्वीपीय रणनीति पर भी समान रूप से ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है।

यह उपयुक्त समय है कि भारत यूरोप के साथ यूरेशिया की सुरक्षा पर रणनीतिक वार्ता शुरू करे, क्योंकि यूरेशिया भारत की महाद्वीपीय रणनीति के पुनर्संयोजन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

भारत को अब 'हिंद-प्रशांत' की ही तरह 'यूरेशियाई' नीति के विकास पर भी ध्यान केंद्रित करना चाहिये, क्योंकि यह हिंद-प्रशांत में भारत और यूरोप की नवीन संलग्नता को स्वाभाविक रूप से एक पूरकता प्रदान करेगा।

यूरेशिया के विषय में

- यूरेशिया का संघटन: भौगोलिक रूप से, यूरेशिया एक विवर्तनिक प्लेट है जो यूरोप और एशिया के अधिकांश हिस्सों के अंदर निहित है। लेकिन यदि हम इसकी राजनीतिक सीमाओं की बात करें तो इसके संघटन के संबंध में कोई साझा अंतर्राष्ट्रीय परिभाषा मौजूद नहीं है।
    - नई दिल्ली के लिये यह उपयुक्त है कि इस क्षेत्र की पुनर्कल्पना में यूरेशिया की व्यापक संभव परिभाषा का उपयोग करे।
- भारत-यूरेशिया ऐतिहासिक संबंध: यूरेशिया के साथ भारत के प्राचीन सभ्यतागत संबंधों के संदर्भ प्राप्त होते हैं। बौद्ध युग में संघ और श्रेणी के बीच सहयोग ने दोनों भूभागों के बीच दीर्घकालिक अंत:क्रिया को जन्म दिया।
    - भारत में अंग्रेज़ों के आगमन और उपमहाद्वीप में एक क्षेत्रीय इकाई के रूप में 'राज' के समेकन ने मध्य एशिया में भारत के प्रभाव का बाह्य प्रक्षेपण देखा।
        - 19वीं सदी के अंत और 20वीं सदी के आरंभ में 'ग्रेट गेम' के दौरान रूस के साथ ब्रिटिश प्रतिद्वंद्विता ने यूरेशियाई भू-राजनीति को अविभाजित भारत के सुरक्षा एजेंडे में सबसे ऊपर रख दिया था।
    - लेकिन वर्ष 1947 में भारतीय उपमहाद्वीप के विभाजन और आंतरिक एशिया से भारत के भौतिक अलगाव ने भारत को यूरेशियाई भू-राजनीति से अलग-थलग कर दिया।
        - यूरेशियाई भू-राजनीति में विस्तारित भारतीय भूमिका के लिये भौगोलिक सीमितता (जो पाकिस्तान के अस्तित्व से संपुष्ट होता है) से पार पाना अत्यंत महत्त्वपूर्ण होगा।
- भारत की यूरेशियाई रणनीति: हाल ही में आयोजित 'अफगानिस्तान पर दिल्ली की क्षेत्रीय सुरक्षा वार्ता' भारत द्वारा एक यूरेशियाई रणनीति विकसित करने का ही एक अंग है। भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार (NSA) ने इस चर्चा में शामिल होने के लिये पाकिस्तान, ईरान, मध्य एशिया, रूस और चीन के अपने समकक्षों को आमंत्रित किया था।
    - हालाँकि, पाकिस्तान और चीन इस बैठक में शामिल नहीं हुए। अफगानिस्तान के मामले में भारत के साथ संलग्न होने की पाकिस्तान की अनिच्छा से एक नई यूरेशियाई रणनीति को आकार देने में दिल्ली की इस्लामाबाद के साथ लगातार बनी रही समस्या रेखांकित होती है।
    - यह यूरेशिया के संबंध में एक भारतीय रणनीति की तात्कालिकता की भी पुष्टि करता है।
- यूरेशिया में संयुक्त राज्य अमेरिका के हित: वाशिंगटन की हिंद-प्रशांत रणनीति यूरेशिया के उभार के संबंध में प्रमुखता से विचार करती प्रतीत नहीं होती।
    - एशिया में अमेरिका के हित मुख्य रूप से पश्चिमी प्रशांत और दक्षिण चीन सागर में निहित हैं और ये दोनों ही क्षेत्र यूरेशियाई थिएटर के केंद्र से दूर हैं।

  - हालाँकि, हिंद-प्रशांत समुद्री क्षेत्र में चीन की ओर से बढ़ती चुनौतियों के बीच वाशिंगटन ने यूरेशिया के लिये अपनी रणनीतिक प्रतिबद्धताओं पर पुनर्विचार करना शुरू कर दिया है।
    - यूरोप की सामूहिक सुरक्षा के लिये अमरीका और यूरोपीय संघ अपने ट्रांस-अटलांटिक उत्तरदायित्वों के पुनर्संतुलन संबंधी संवाद में संलग्न हो रहे हैं।
- यूरेशिया में एक मुख्य पक्ष के रूप में चीन: यूरेशिया में हाल की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना चीन का नाटकीय उदय और उसकी बढ़ती रणनीतिक मुखरता, आर्थिक शक्ति का विस्तार एवं बढ़ता राजनीतिक प्रभुत्व है।
  - भूटान और भारत के साथ लंबी एवं विवादित सीमा के प्रति बीजिंग का दृष्टिकोण, ताजिकिस्तान में सैन्य उपस्थिति का उसका प्रयास, अफगानिस्तान में एक बड़ी भूमिका निभाने की उसकी तीव्र इच्छा, और विस्तृत उप-हिमालयी क्षेत्र के मामलों में उसकी अधिकाधिक संलग्नता उसके बढ़ते प्रभाव की पुष्टि करती है।
    - विश्व की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में चीन के वाणिज्यिक प्रभाव को दुनिया भर में महसूस किया जाता है और भौतिक निकटता आंतरिक एशियाई क्षेत्रों पर चीन के आर्थिक प्रभाव को कई गुना बढ़ा देती है।
  - मध्य एशिया, रूस और अटलांटिक क्षेत्र में चीन की 'बेल्ट एंड रोड' पहल के विस्तार और चीन पर यूरोप की बढ़ती आर्थिक निर्भरता ने यूरेशिया क्षेत्र में बीजिंग के प्रभुत्वशाली लाभ की स्थिति को और सुदृढ़ किया है।
    - चीन की इस लाभ की स्थिति को रूस के साथ उसके गहन गठबंधन से बल मिला है जो यूरेशियाई हृदयभूमि पर व्यापक विस्तार रखता है।

आगे की राह

- यूरोप को भारत के महाद्वीपीय समीकरण में वापस लाना: स्वतंत्रता से पहले कई भारतीय राष्ट्रवादियों ने ब्रिटिश उपनिवेशवाद से देश की मुक्ति के लिये यूरोप का रुख किया था।
  - लेकिन स्वतंत्रता के बाद, मास्को के साथ गठबंधन के लिये नई दिल्ली के झुकाव के कारण यूरोप के रणनीतिक महत्त्व की उपेक्षा की गई है।
  - चूँकि भारत अब यूरोप के साथ अपनी संलग्नता बढ़ा रहा है, यह उपयुक्त समय है कि वह यूरेशियाई सुरक्षा पर 'ब्रसेल्स' (जिसे प्राय: यूरोपीय संघ की राजधानी के रूप में देखा जाता है) के साथ रणनीतिक वार्ता शुरू करे।
- यूरोपीय संघ और नाटो के सदस्यों के साथ संलग्नता: भारत की यूरेशियाई नीति में अनिवार्य रूप से यूरोपीय संघ और उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन (NATO) के साथ अधिकाधिक संलग्नता शामिल होनी चाहिये।
  - ब्रसेल्स—जहाँ यूरोपीय संघ और नाटो दोनों के मुख्यालय स्थित हैं, में भारत को अपने इंडियन मिशन में एक समर्पित सैन्य कार्यालय की स्थापना करनी चाहिये जो यूरोप के साथ निरंतर सुरक्षा वार्ता की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम साबित होगा।
- यूरेशियाई सुरक्षा पर भारत-रूस संवाद को गहन करना: यद्यपि हिंद-प्रशांत, क्वाड, चीन और तालिबान जैसे विभिन्न विषयों में भारत और रूस के बीच वास्तविक मतभेद मौजूद हैं, किंतु दोनों देशों के पास अफगानिस्तान के मामले में अपने मतभेदों को कम करने यूरेशियाई सुरक्षा पर सहयोग बढ़ाने के तार्किक कारण भी मौजूद हैं।
  - इसके अलावा, रूस ने हाल के वर्षों में तालिबान के साथ अपने संबंध विकसित किये हैं। तालिबान के साथ किसी भी तरह की प्रत्यक्ष संलग्नता के विषय में भारत को रूस के समर्थन की आवश्यकता होगी।
- भू-आर्थिक सहयोग: यदि सुरक्षा के दृष्टिकोण से नहीं तो कम-से-कम भू-आर्थिक दृष्टिकोण से यूरोपीय संघ को 'हिंद-प्रशांत' से संलग्न किया जाना लाभदायक होगा और भारत को इसके लिये प्रयास करना चाहिये।
  - यह क्षेत्रीय अवसंरचना के सतत् विकास के लिये बड़े पैमाने पर आर्थिक संसाधन जुटाने, राजनीतिक प्रभाव को नियंत्रित कर सकने और यूरेशियाई दृष्टिकोण को आकार देने के लिये अपनी 'सॉफ्ट पावर' का लाभ उठा सकता है।
- ईरान और अरब देशों के साथ सहयोग: ईरान की भौगोलिक अवस्थिति उसे अफगानिस्तान और मध्य एशिया के भविष्य के लिये महत्त्वपूर्ण बनाती है, तो अरब देशों का धार्मिक प्रभाव भी इस भूभाग के लिये बेहद अहम है।

- भारत के प्रति शत्रुतापूर्ण रुख रखने वाले तुर्की-पाकिस्तान गठबंधन पर काबू पाने के लिये भी ईरान और अरब देशों के साथ भारत की साझेदारी महत्त्वपूर्ण है।

- यूरेशिया में एकीकृत दृष्टिकोण: इसके लिये कहीं अधिक सूक्ष्म प्रतिक्रिया की आवश्यकता होगी।
    - प्रतिरोध को मजबूत करना और इसके साथ-साथ बहु-संरेखण की दिशा में सक्रियता से आगे बढ़ना समाधान हो सकता है जिसके लिये ईरान के साथ बिगड़ते संबंधों को ठीक कर, रूस के साथ एक ठोस भू-राजनीतिक सौदेबाजी कर और पाकिस्तान की ओर शांति का हाथ बढ़ाकर यूरेशिया को फिर से अपनी रणनीति के केंद्र में लाने की आवश्यकता होगी।

निष्कर्ष

- भारत ने गुज़रते दशकों में यूरेशिया के संघटक क्षेत्रों के साथ अलग-अलग संलग्नता रखी है, लेकिन यूरेशिया में मजबूती से पैर जमाने के लिये नई दिल्ली को अब एक एकीकृत दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।
    - भारत को निश्चित रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप, रूस, चीन, ईरान और अरब की खाड़ी के प्रसंग में अपने रास्ते में कई विरोधाभासों का सामना करना पड़ेगा, लेकिन इन अंतर्विरोधों से उसके कदम रुकने नहीं चाहिये।
    - भारत की कुंजी व्यापक रणनीतिक सक्रियता में निहित है, जो यूरेशिया में सभी दिशाओं में अवसर के द्वार खोल सकती है।

दृष्टि The Vision

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

इलेक्ट्रिक वाहनः भविष्य का परिवहन

संदर्भ

विश्व के 10 सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में से 9 भारत में स्थित हैं। ग्रेटर नोएडा, नोएडा, लखनऊ और दिल्ली सहित ये सभी शहर उत्तर भारत में स्थित यद्यपि वातावरण और मानव स्वास्थ्य के लिये अत्यंत हानिकारक इस प्रदूषण में कई कारकों का योगदान है, वाहनों से होने वाला प्रदूषण इसमें एक उल्लेखनीय भूमिका निभाता है।

इसलिये यह आश्चर्यजनक नहीं है कि भारत में धीरे-धीरे लेकिन निरंतर रूप से इलेक्ट्रिक वाहनों के प्रसार को प्रोत्साहित किया जा रहा है। इसके साथ ही, परिवहन की अपनी सक्षमता के मामले में हम फिर से पूर्व की यथास्थिति पर लौट चले हैं। 1900 के दशक में इलेक्ट्रिक वाहन (EV) के पक्ष में पूरी बहस ईंधन-आधारित वाहनों के समक्ष घुटने टेक देने को मज़बूर हुई थी, लेकिन उम्मीद है कि अब ऐसा नहीं होगा।

वर्ष 1886 में एक जर्मन इंजीनियर कार्ल बेंज़ (Carl Benz) ने अपने 'गैस इंजन से संचालित वाहन' के लिये आवेदन किया था और उन्हें पेटेंट (37435) भी प्रदान की गई थी। इसके कुछ ही माह बाद 'बेंज़ मोटर' कार का व्यावसायिक उत्पादन शुरू हो गया। अधिकांश साक्ष्यों के अनुसार यहीं से गैस इंजनों से संचालित वाहनों के व्यावसायिक उत्पादन की शुरुआत हुई थी।

गौरतलब है कि बेंज द्वारा पेटेंट प्राप्त करने से कुछ वर्ष पूर्व अमेरिका के 'आयोवा प्रांत' के एक रसायनज्ञ विलियम मॉरिसन (William Morrison) को भी छह सीटों वाले इलेक्ट्रिक वाहन को संचालित करने में सफलता मिली थी। वर्ष 1900 तक अमेरिका में बिकने वाले सभी वाहनों में इलेक्ट्रिक कारों की हिस्सेदारी एक तिहाई से अधिक हो चुकी थी। इलेक्ट्रिक कारों की इस प्रगति को एक बड़ा धक्का तब लगा, जब फोर्ड ने व्यापक स्तर पर ऑटोमोबाइल का उत्पादन शुरू कर दिया, जिसकी कीमतें भी अपेक्षाकृत कम थीं। 1900 के दशक की शुरुआत में व्यापक उत्पादन के कारण कारों की कम कीमत और ईंधन की निम्न लागत के कारण वर्तमान में मोटरकार और बाइक अंधाधुंध हमारी सड़कों पर दौड़ रहे हैं।

नए परिदृश्य में, इलेक्ट्रिक वाहनों के लिये बढ़ते समर्थन के साथ भारत को बेहतर चार्जिंग इंफ्रास्ट्रक्चर, बैटरी निर्माण फैक्ट्रियों और इलेक्ट्रिक वाहनों को अपनाने हेतु कार कंपनियों एवं उपभोक्ताओं के लिये प्रोत्साहन के साथ स्वयं को तैयार करने की ज़रूरत है।

इलेक्ट्रिक वाहन (EVs)

- इलेक्ट्रिक वाहन आंतरिक दहन इंजन के बजाय इलेक्ट्रिक मोटर से संचालित होते हैं और इनमें ईंधन टैंक के बजाय बैटरी लगी होती है।
- सामान्य तौर पर, इलेक्ट्रिक वाहनों की परिचालन लागत कम होती है, क्योंकि इनकी संचालन प्रक्रिया सरल होती है और ये पर्यावरण के लिये भी अनुकूल होते हैं।
- भारत में, इलेक्ट्रिक वाहन के लिये ईंधन की लागत लगभग 80 पैसे प्रति किलोमीटर है। इसकी तुलना में, आज भारतीय शहरों में 100 रुपए प्रति लीटर से अधिक के पेट्रोल मूल्य के साथ पेट्रोल-संचालित वाहनों पर 7-8 रुपए प्रति किलोमीटर का खर्च आता है।

भारत में संभावनाएँ

- निजी क्षेत्र ने इलेक्ट्रिक वाहनों की अनिवार्यता का स्वागत किया है।
- अमेज़न, स्विगी और ज़ोमैटो जैसी कंपनियाँ अपने डिलीवरी कार्यों के लिये EVs का अधिकाधिक प्रयोग कर रही हैं।
- महिंद्रा जैसी कार निर्माता कंपनी की ओला जैसी उपभोक्ता सेवाप्रदाता कंपनी के साथ और टाटा मोटर्स की ब्लू स्मार्ट मोबिलिटी के साथ साझेदारी से अधिकाधिक इलेक्ट्रिक वाहन डिलीवरी और राइड-हेलिंग सेवाओं की सुनिश्चितता होगी।

संबद्ध चुनौतियाँ

- चार्जिंग इंफ्रास्ट्रक्चर की कमी: इलेक्ट्रिक वाहनों से संबंधित सर्वाधिक गंभीर चुनौती भारत में चार्जिंग इंफ्रास्ट्रक्चर की कमी है।
  - इलेक्ट्रिक वाहन आमतौर पर लिथियम-आधारित बैटरी द्वारा संचालित होते हैं। इन बैटरियों को आमतौर पर प्रत्येक 200-250 किलोमीटर पर चार्ज करने की आवश्यकता होती है। इसलिये चार्जिंग पॉइंट्स के सघन प्रसार की आवश्यकता है।

- धीमी चार्जिंग की समस्या: निजी लाइट-ड्यूटी स्लो चार्जर का उपयोग कर घर पर EVs को फुल चार्ज करने में 12 घंटे तक का समय लगता है। घर पर धीमी चार्जिंग की इस तकनीकी समस्या के विकल्प के रूप में देश भर में चुनिंदा चार्जिंग स्टेशन ही उपलब्ध हैं।
    - भारत जैसे बड़े और घनी आबादी वाले देश के लिये इन चार्जिंग स्टेशनों की संख्या बेहद अपर्याप्त है।
- इलेक्ट्रिक वाहन उत्पादन के लिये एक स्थिर नीति का अभाव: इलेक्ट्रिक वाहन उत्पादन एक पूँजी गहन क्षेत्र है, जहाँ एकसमानता और लाभ प्राप्ति के लिये दीर्घकालिक योजना की आवश्यकता है। इलेक्ट्रिक वाहन उत्पादन से संबंधित सरकारी नीतियों की अनिश्चितता इस उद्योग में निवेश को हतोत्साहित करती है।
- तकनीकी चुनौतियाँ: भारत इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादन के मामले में तकनीकी रूप से पिछड़ा हुआ है, जबकि बैटरी, सेमीकंडक्टर्स, कंट्रोलर आदि इलेक्ट्रिक वाहन उद्योग के लिये काफी महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।
- संबद्ध अवसंरचना समर्थन का अभाव: 'एसी बनाम डीसी' चार्जिंग स्टेशनों, ग्रिड स्थिरता और 'रेंज एंग्जायटी' (यह भय कि बैटरी जल्द ही खत्म हो जाएगी) के संबंध में स्पष्टता की कमी कुछ अन्य कारक हैं, जो इलेक्ट्रिक वाहन उद्योग के विकास को बाधित कर रहे हैं।
- घरेलू उत्पादन के लिये सामग्री की उपलब्धता में कमी: बैटरी इलेक्ट्रिक वाहनों का सबसे महत्त्वपूर्ण घटक है। भारत में लिथियम और कोबाल्ट का कोई ज्ञात भंडार नहीं है, जो बैटरी उत्पादन के लिये आवश्यक है। भारत लिथियम आयन बैटरी के आयात के लिये जापान और चीन जैसे देशों पर निर्भर है।
- कुशल कामगारों की कमी: EVs को लगातार सर्विसिंग की आवश्यकता होती है और सर्विसिंग के लिये उच्च स्तर के कौशल की आवश्यकता होती है। भारत में ऐसे कौशल विकास के लिये समर्पित प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों का अभाव है।

आगे की राह

- इलेक्ट्रिक वाहन में अनुसंधान एवं विकास को बढ़ाना: भारतीय बाज़ार को स्वदेशी प्रौद्योगिकियों के लिये प्रोत्साहन की आवश्यकता है, जो रणनीतिक और आर्थिक दोनों दृष्टिकोण से भारत के अनुकूल हों।
    - चूँकि कीमतों को कम करने के लिये स्थानीय अनुसंधान एवं विकास में निवेश आवश्यक है, इसलिये स्थानीय विश्वविद्यालयों और मौजूदा औद्योगिक केंद्रों का सहयोग लेना उपयुक्त होगा।
    - भारत को यूनाइटेड किंगडम जैसे देशों के साथ मिलकर कार्य करना चाहिये और इलेक्ट्रिक वाहनों के विकास को सुसंगत बनाना चाहिये।
- लोगों को जागरूक करना: पुराने मानदंडों को तोड़ना और एक नए उपभोक्ता व्यवहार का निर्माण करना हमेशा चुनौतीपूर्ण होता है। इसलिये, भारतीय बाज़ार में व्याप्त आशंकाओं को दूर करने और इलेक्ट्रिक वाहनों को बढ़ावा देने के लिये लोगों को जागरूक और सुग्राही बनाने की आवश्यकता है।
- व्यवहार्य बिजली मूल्य निर्धारण: बिजली की मौजूदा कीमतों को देखते हुए 'होम चार्जिंग' भी एक समस्या हो सकता है। बिजली की कीमतों को कम करने के लिये कोयले पर आधारित थर्मल पावर प्लांट के बदले अन्य विकल्प आजमाने होंगे।
    - इस प्रकार, इलेक्ट्रिक कारों के विकास को सुविधाजनक बनाने के लिये संपूर्ण बिजली उत्पादन परिदृश्य में भी परिवर्तन लाए जाने की आवश्यकता है।
    - इस संदर्भ में सुखद है कि भारत वर्ष 2025 तक विश्व के सबसे बड़े सौर एवं ऊर्जा भंडारण बाज़ारों में से एक बनने की राह पर है।
    - सौर ऊर्जा से संचालित ग्रिड समाधानों का संयोजन एक हरित विकल्प के रूप में पर्याप्त चार्जिंग अवसंरचना को सुनिश्चित करेगा।
- क्लोज़्ड-लूप मोबिलिटी इकोसिस्टम का निर्माण करना: इलेक्ट्रिक आपूर्ति श्रृंखला के लिये विनिर्माण को सब्सिडी प्रदान करने से निश्चित रूप से भारत में इलेक्ट्रिक वाहनों के विकास परिदृश्य में सुधार होगा।
    - चार्जिंग इंफ्रास्ट्रक्चर के साथ ही एक सुदृढ़ आपूर्ति श्रृंखला की स्थापना की भी आवश्यकता होगी।
    - इसके अलावा, बैटरी के रीसाइक्लिंग स्टेशनों को बैटरी से धातुओं (जिनका उपयोग इलेक्ट्रिफिकेशन के लिये किया जाता है) को पुनर्प्राप्त करने की आवश्यकता होगी, ताकि 'क्लोज़-लूप' का निर्माण हो सके।
- ज्ञात हो कि चीन और दक्षिण कोरिया की कंपनियाँ लिथियम-आधारित ईवी बैटरी की सबसे बड़ी आपूर्तिकर्त्ता हैं। ऐसे में पेट्रोलियम निर्यातक देशों के संगठन (OPEC) की जगह लेने के लिये एक नई वैश्विक व्यवस्था उभर सकती है।
    - बेहतर चार्जिंग अवसंरचना, बैटरी निर्माण फैक्ट्रियों और कार कंपनियों एवं उपभोक्ताओं को इलेक्ट्रिक अपनाने के लिये स्मार्ट प्रोत्साहन प्रदान करने के साथ भारत को इस नई व्यवस्था में अपना उपयुक्त स्थान प्राप्त करने के लिये योजना तैयार करनी होगी।

भविष्य के लिये 5G टेक्नोलॉजी

संदर्भ

पाँचवीं पीढ़ी का मोबाइल नेटवर्क या 5G, मोबाइल नेटवर्क का अगला स्तर है जो अधिक कुशल और विकासशील समाजों को सुविधा प्रदान कर चौथी औद्योगिक क्रांति (Industrial 4.0), सेवा वितरण की गुणवत्ता, नवाचार आदि को आकार प्रदान करेगा।

वाणिज्यिक 5G नेटवर्क वर्ष 2020 से तैनात किया जाना शुरू हुआ है और अपेक्षित है कि वर्ष 2025 तक यह विश्व मोबाइल कनेक्शन के 12% (1.1 बिलियन) तक पहुँच जाएगा और ऑपरेटरों के लिये 1.3 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर तक का राजस्व उत्पन्न कर रहा होगा।

5G द्वारा उपयोग की जाने वाली प्रौद्योगिकी अप्रत्याशित उच्च स्तरों पर डेटा ट्रांसफर गति में सुधार लाएगी (लगभग 100 गुना अधिक गति) और विलंबता को कम कर सेवाओं में मदद करेगी। इस प्रकार, 5G आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है, लेकिन भारत को यह विचार करने की ज़रूरत है कि वह इस प्रौद्योगिकी की तैनाती के लिये अभी तैयार है या नहीं।

क्षमता/संभावना

- नई पीढ़ी के मोबाइल नेटवर्क में भारतीय अर्थव्यवस्था को व्यापक लाभ प्रदान करने की परिवर्तनकारी क्षमता है, जिसे जब कृत्रिम बुद्धिमत्ता के साथ उन्नत किया जाता है तो यह कनेक्टेड और ऑटोनोमस प्रणालियों को एक नया आयाम प्रदान करता है।
- इसका उपयोग भारतीय नीति निर्माताओं को नागरिकों एवं व्यवसायों को शिक्षित एवं सशक्त बनाने और मौजूदा शहरों को स्मार्ट एवं अभिनव शहरों में बदलने का एक अवसर प्रदान कर सकता है।
- सामाजिक-आर्थिक लाभ: यह नागरिकों और समुदायों को एक व्यापक उन्नत, अधिक डेटा-गहन, डिजिटल अर्थव्यवस्था द्वारा प्रदत्त सामाजिक-आर्थिक लाभ और सुविधाएँ प्राप्त करने का अवसर दे सकता है।
  - मोटे तौर पर, भारत में 5G के उपयोग में उन्नत आउटडोर और इनडोर ब्रॉडबैंड, इंटरनेट ऑफ थिंग्स, स्मार्ट सिटी, स्मार्ट कृषि, ऊर्जा निगरानी, रिमोट मॉनिटरिंग, स्मार्ट ग्रिड, टेलीहेल्थ, औद्योगिक स्वचालन, दूरस्थ रोगी निगरानी और औद्योगिक स्वचालन जैसे विषय शामिल हो सकते हैं।
  - भारत के लिये एक उन्नत डिजिटल क्रांति की ओर बढ़ने की व्यापक संभावना है।

संबंधित मुद्दे

- लेट एडॉप्टर: भारत, बांग्लादेश और इंडोनेशिया जैसे एशिया-प्रशांत क्षेत्र के देशों में 5G प्रौद्योगिकी को अपनाने में देरी हो रही है, इसलिये इन्हें सेवा से नगण्य राजस्व प्राप्त होगा।
  - ऐसे 'लेट एडॉप्टर' (देर से प्रौद्यिगिकी अपनाने वाले) देशों को अगले 12-18 महीनों में 5G मोबाइल सेवा राजस्व प्राप्त होने की उम्मीद नहीं है।
- कम सरकारी सब्सिडी: मौजूदा राजकोषीय घाटे के बीच स्पेक्ट्रम नीलामी के लिये सरकारों द्वारा निर्धारित उच्च आरक्षित मूल्यों के इतिहास को देखते हुए सरकारी सब्सिडी की संभावना कम ही है।
- 'डिजिटल डिवाइड': 5G अल्पावधि में ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच के डिजिटल डिवाइड को नहीं भरेगा, बल्कि इसे और बढ़ाएगा क्योंकि शहरी क्षेत्रों में भी 5G की व्यावसायिक व्यवहार्यता की अधिकतम पहुँच नहीं है।
  - इसलिये, ग्रामीण क्षेत्रों में भी यह आसानी से उपलब्ध नहीं होगा।
- 5G- एक विशिष्ट सेवा: 5G, 3G एवं 4G (जो व्यापक सेवाएँ हैं) के विपरीत एक विशिष्ट सेवा होगी। यह अपेक्षाकृत एक लंबी अवधि में गहन या तीव्र हो जाएगी।
  - 5G प्रौद्योगिकी का रोलआउट 4G से अलग होगा; इसे विशिष्ट क्षेत्रों और हिस्सों में पेश किया जाएगा।
- पिछली प्रौद्योगिकी की अपर्याप्त पहुँच: उपभोक्ता अभी भी कॉल ड्रॉप और बाधित डेटा सेवाओं जैसे बुनियादी नेटवर्क मुद्दों से जूझ रहे हैं।
  - अभी भी ऐसे क्षेत्र मौजूद हैं जहाँ 4G नेटवर्क स्थिर नहीं हुए हैं, जिससे इंटरनेट सेवाओं में बार-बार व्यवधान उत्पन्न होता है।
  - एक नया 5G प्लेटफॉर्म शुरू करने से पहले मौजूदा 4G नेटवर्क के सेवा मानकों की गुणवत्ता की पूर्ति करना महत्त्वपूर्ण है।

नोट :

- महत्त्वपूर्ण अवसंरचनाओं को सक्षम करना: 5G के लिये संचार प्रणाली की मूल संरचना में मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता होगी। 5G के उपयोग से डेटा ट्रांसफर का मुख्य दोष यह है कि यह अधिक दूरी तक डेटा का परिवहन नहीं कर सकता है। इसलिये, अवसंरचना को सक्षम करने के लिये 5G प्रौद्योगिकी के अवसंरचनात्मक विकास की भी ज़रूरत होगी।
- उपभोक्ताओं पर वित्तीय दायित्व: 4G से 5G प्रौद्योगिकी में ट्रांजीशन के लिये, नवीनतम सेलुलर प्रौद्योगिकी को अपग्रेड करना होगा, जिससे उपभोक्ताओं पर वित्तीय दायित्व उत्पन्न होगा।

आगे की राह

- मौजूदा अवसंरचना और क्षमता का विश्लेषण: भारत की तात्कालिक प्राथमिकता अंतिम उपयोगकर्त्ताओं और कवर की जाने वाली आबादी की पहचान करना, मौजूदा नेटवर्क एवं ऑपरेटरों का विश्लेषण, 5G रोल आउट के लिये शहरों की पहचान करना, एक निवेश मॉडल तैयार करना एवं डिजिटल जोखिम को न्यूनतम करना और बाह्य विषयों एवं विभिन्न क्षेत्रों के उपयोग पर आधारित मूल्य निर्धारण करना है।
    - भारत में स्वतंत्र विशेषज्ञों द्वारा लागत लाभ विश्लेषण के बाद 5G की तैनाती की सावधानीपूर्वक योजना बनाने की आवश्यकता है जो सुविधा, अनुकरण, नीलामी, प्रतिस्पर्द्धा की सुनिश्चितता, कार्यशील बाज़ार जैसे बाज़ार तंत्रों के माध्यम से एकसमान अवसर प्रदान करेगा।
- क्षेत्र-अनुकूल कदम: चूँकि 5G नेटवर्क की तैनाती महँगी है, इसलिये केंद्र और राज्य सरकारों दोनों को ऐसे उपायों पर विचार करने की आवश्यकता पड़ सकती है, जो फाइबर निवेश को प्रेरित करे, सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) के माध्यम से निवेश आकर्षित करे और मामूली ब्याज आधार पर निवेश निधि की सुविधा प्रदान करे।
    - अन्य नीतिगत सुधारों के साथ-साथ स्वचालित मार्ग के तहत दूरसंचार क्षेत्र में 100% प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति इस क्षेत्र के लिये निवेश आकर्षित करने हेतु शुभ संकेत है। 5G के कार्यान्वयन के लिये भारी निवेश की आवश्यकता है और इस संदर्भ में राहत पैकेज एक स्वागत योग्य कदम है।
- कर संबंधी मुद्दे: सरकार को कानूनों और विनियमों/करों और सब्सिडी के माध्यम से सूचना विषमता और नकारात्मक बाह्यताओं को संबोधित करने की आवश्यकता है।
    - 5G प्रौद्योगिकी की तैनाती के लिये ट्रैफिक लाइट, लैंप पोस्ट जैसे सरकारी अवसंरचनाओं तक पहुँच के अधिकार की भी आवश्यकता होगी, जहाँ वायरलेस ऑपरेटर इलेक्ट्रॉनिक स्मॉल सेल उपकरणों की तैनाती कर सकते हैं।
    - इसके साथ-साथ, राज्य और स्थानीय सरकारों द्वारा ऑपरेटरों से 5G उपकरणों की किफायती तैनाती के लिये उचित शुल्क वसूल किया जा सकता है।
    - इसके अलावा, फाइबर नेटवर्क की तैनाती के लिये कर के बोझ को हटाने से संबंधित लागत कम हो जाती है, जिससे निवेश को बढ़ावा मिलता है (जैसा सिंगापुर ने किया है) और इससे भारत में फाइबर की सुचारू तैनाती में मदद मिल सकती है।
- ग्रामीण-शहरी अंतर को कम करना: 5G को विभिन्न बैंड स्पेक्ट्रम पर और लो बैंड स्पेक्ट्रम पर तैनात किया जा सकता है; यह सीमा व्यापक है जो ग्रामीण क्षेत्रों के लिये सहायक होगी।
- सरकार की सहायता: इनपुट पर सरकार का पूरा नियंत्रण होता है। 5G के प्रमुख इनपुट में से एक बैंड स्पेक्ट्रम है।
    - स्पेक्ट्रम के डिज़ाइन का प्रबंधन कर, सरकार लोगों द्वारा भुगतान की जाने वाली कीमत को नियंत्रित कर सकती है।
    - सरकार दूरसंचार कंपनियों को ऐसे नेटवर्क शुरू करने में सहायता कर सकती है, जो जनता के लिये संवहनीय और किफायती हों।
- स्पेक्ट्रम प्राइसिंग की समस्या से निपटना: हाल के दिनों में सरकार को दो असफल नीलामियों का सामना करना पड़ा है। इनमें से दूसरा मामला 5G स्पेक्ट्रम का था जो पूर्णत: बोली आकर्षित करने में विफल रहा।
    - आरक्षित मूल्य के वर्तमान प्रस्ताव स्पष्ट रूप से एक सफल नीलामी आयोजित करने के लिये मूल्यों को बदलने की आवश्यकता का सुझाव देते हैं।
    - इस क्षेत्र में व्याप्त वित्तीय तनाव और सेवाओं की वहनीयता को ध्यान में रखते हुए मूल्य निर्धारण पर समुचित कार्य करना होगा।
- भारत में विनिर्माण क्षेत्र को सक्षम बनाना: चूँकि 5G ने भारत में आकार लेना शुरू कर दिया है, घरेलू दूरसंचार विनिर्माण बाज़ार को सुदृढ़ करना महत्त्वपूर्ण है ताकि न केवल भारत में 5G के उपयोगकर्त्ता, बल्कि इन प्रौद्योगिकियों के निर्माता और प्रदाता भी वैश्विक क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने में सक्षम हो सकें।

- उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण से व्यवहार्य प्रौद्योगिकी: व्यापक 5G तैनाती के लिये, इसे वित्तीय रूप से व्यवहार्य बनाने की आवश्यकता है, अन्यथा ग्रामीण एकीकरण की बात महज कोरी कल्पना बनकर ही रह जाएगी।
- इसके साथ ही, 5G प्रौद्योगिकी को दूरसंचार ऑपरेटरों के लिये भी व्यवहार्य होना चाहिये।

निष्कर्ष

चूँकि भारत ने लागत प्रभावी 4G प्रौद्योगिकी के कारण अपने दूरस्थ क्षेत्रों में भी पहले से ही एक डिजिटल क्रांति के दर्शन कर रखे हैं, 5G का उपयोग इस क्षेत्र के विकास में और विनिर्माण एवं नवाचार केंद्र के रूप में उभरने के भारत के लक्ष्य को सुविधाजनक बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। 5G का नकारात्मक प्रभाव 'डिजिटल डिवाइड' को और बढ़ा रहा है। इसलिये, सरकारी नीतियों को वहनीय कवरेज पर भी ध्यान देना चाहिये।

दृष्टि The Vision

पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण

कार्बन तटस्थता: भारत का लक्ष्य

संदर्भ

जलवायु कार्रवाई के मामले में विकसित देश बेहद खराब ट्रैक रिकॉर्ड रखते हैं। इस संदर्भ में जलवायु कार्रवाई के लिये हाल ही में घोषित उनकी प्रतिज्ञाएँ—जिनमें वर्ष 2050 तक शुद्ध-शून्य उत्सर्जन की घोषणा भी शामिल है, हमारे ग्रह की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये अपेक्षाकृत कम ही मानी जा सकती है। इस प्रकार, विकासशील देशों पर 'डू मोर' और सदृश शुद्ध-शून्य प्रतिज्ञाओं की घोषणा करने का दबाव जलवायु कार्रवाई के बोझ को दुनिया की निर्धनतम आबादी पर स्थानांतरित कर देने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

इसके अलावा, भारत ने एक पाँच-सूत्री कार्ययोजना के अंग के रूप में वर्ष 2070 तक कार्बन तटस्थता प्राप्त कर लेने की घोषणा की है, जिसमें वर्ष 2030 तक उत्सर्जन को 50% तक कम कर लेना भी शामिल है। भारत की विकास आवश्यकताओं के हित में इस निर्णय का विश्लेषण किये जाने की आवश्यकता है।

विकास के लिये ऊर्जा

- ऊर्जा के उपयोग और विकास के बीच एक मज़बूत संबंध होता है। कोई भी देश ऊर्जा आपूर्ति में वृद्धि किये बिना अपनी आबादी के लिये उचित स्तर का कल्याण सुनिश्चित करने में कामयाब नहीं हुआ है।
  - लेकिन दुर्भाग्य से, ऊर्जा के सभी उपलब्ध स्रोत—जिन्हें औद्योगिक उत्पादन या परिवहन जैसे विशिष्ट उद्देश्यों के लिये निर्देशित किया जा सकता है, प्राय: गंभीर प्रभाव उत्पन्न करते हैं, विशेष रूप से कार्बन डाइऑक्साइड का उत्सर्जन, जो 'ग्लोबल वार्मिंग' के लिये सर्वाधिक उत्तरदायी ग्रीनहाउस गैस है।
- वर्ष 1850 से वर्ष 2019 तक विश्व ने लगभग 2,500 बिलियन टन कार्बन डाइऑक्साइड का उत्सर्जन किया है। विकसित देश, जो वैश्विक आबादी के 18% का वहन करते हैं, इस उत्सर्जन के 60% से अधिक के लिये ज़िम्मेदार हैं।
  - जीवाश्म ईंधन संसाधनों के अनियंत्रित उपयोग ने इन देशों को अपनी अर्थव्यवस्थाओं का आधुनिकीकरण करने और 'वैश्विक दक्षिण' अथवा ग्लोबल साउथ में निवास करने वाली शेष 82% आबादी की तुलना में अत्यधिक विकास करने का अवसर दिया है।
- संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन फ्रेमवर्क कन्वेंशन (UNFCCC) अमीर और गरीब देशों के बीच अंतर या विभेदन के सिद्धांत पर बल रखता है और ग्लोबल वार्मिंग की समस्या के समाधान में अमीर देशों से अग्रणी भूमिका निभाने की अपेक्षा रखता है।
  - लेकिन UNFCCC के लगभग तीन दशकों बाद भी जलवायु कार्रवाई के मामले में विश्व के सबसे अमीर देशों ने निष्क्रियता ही प्रदर्शित की है, जिन्होंने बार-बार उत्सर्जन में कमी और भविष्य के लिये जलवायु वित्त के लक्ष्यों में परिवर्तन करके अपने उत्तरदायित्वों से बचने का प्रयास किया है।
  - हाल के समय में शुद्ध शून्य घोषणाओं पर बल और सभी देशों पर इस संबंध में प्रतिज्ञा प्रकट करने का दबाव भी इसी दिशा में एक अन्य प्रयास है।

शुद्ध शून्य उत्सर्जन

- शुद्ध-शून्य उत्सर्जन का तात्पर्य ग्रीनहाउस गैसों के मानवजनित निराकरण के साथ वैश्विक स्तर पर या क्षेत्र विशेष में मानवजनित कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को संतुलित करने से है।
- सभी देशों पर इस तरह की घोषणाओं के लिये दबाव बनाने का आरंभ वर्ष 2019 के आसपास COP-25 के दौरान हुआ था, जब पेरिस समझौते को लागू होने में एक वर्ष बचा था।
- अलग-अलग देशों और क्षेत्रों द्वारा शुद्ध-शून्य घोषणाएँ कराने का यह विचार पिछले 30 वर्षों से विकसित देशों की निष्क्रियता को छिपाने के लिये एक बहाने के रूप में किया जा रहा है।

- हालाँकि भविष्योन्मुखी ये घोषणाएँ भी ग्रह की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये पर्याप्त नहीं हैं। वर्ष 2030 के लिये अमेरिका, ब्रिटेन और यूरोपीय संघ (27) की "वर्द्धित प्रतिज्ञा" और वर्ष 2050 के आसपास शुद्ध शून्य उत्सर्जन प्राप्त करने के उनके वर्तमान घोषित इरादे का अर्थ यह है कि केवल ये दो प्रमुख भूभाग ही शेष कार्बन बजट के 30% से अधिक का उपभोग कर रहे होंगे।
    - संयुक्त रूप से ये दोनों भूभाग और चीन, वार्मिंग को 1.5 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखने हेतु विश्व के लिये उपलब्ध कार्बन डाइऑक्साइड की तुलना में कम-से-कम 20% अधिक कार्बन डाइऑक्साइड का उत्सर्जन करेंगे।

आगे की राह

- सभी के लिये विकास: जलवायु कार्रवाई के लिये दुनिया को विकसित देशों की ओर से अधिकाधिक महत्त्वाकांक्षाओं के प्रकटीकरण की आवश्यकता है, ताकि कम विकसित देशों को विकास के लिये कुछ अवसर मिल सके।
    - विश्व को श्रम नीरसता और अभाव के उन कई रूपों को समाप्त करने की आवश्यकता है जिससे हमारी अधिकांश आबादी ग्रस्त है।
    - इसके लिये आधुनिक, मितव्ययी और विश्वसनीय सुविधाओं एवं सेवाओं तक सभी व्यक्तियों की पहुँच सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। एक ऐसी दुनिया के लिये तैयारी करना भी महत्त्वपूर्ण है, जिसके 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक गर्म होने की संभावना है। ऐसी दुनिया में जलवायु प्रभावों के विरुद्ध हमारा पहला बचाव विकास ही होगा।
- जलवायु कार्यान्वयन को सुदृढ़ बनाना: भारत को जलवायु कार्यान्वयन के लिये अपने घरेलू संस्थानों के निर्माण और सुदृढ़ीकरण पर ज़ोर देना चाहिये। इसके लिये विकास आवश्यकताओं और निम्न कार्बन अवसरों के बीच संबंधों की पहचान करने की आवश्यकता होगी। इस संदर्भ में एक जलवायु कानून का होना उपयोगी सिद्ध हो सकता है।
- CBDR की पुष्टि: आगामी जलवायु परिवर्तन वार्ता में भारत को 'सामान्य लेकिन विभेदित ज़िम्मेदारी' (Common But Differentiated Responsibility- CBDR) के दीर्घकालिक सिद्धांत की पुष्टि करने की आवश्यकता है, जिसके लिये अमीर देशों को नेतृत्वकारी भूमिका निभाने और ऐसी किसी भी प्रतिज्ञा के विरुद्ध बहस करने की आवश्यकता होगी जो विकास के लिये भारतीय ऊर्जा उपयोग को समय-पूर्व सीमित करने का जोखिम उत्पन्न करती हो।
- नवीकरणीय क्षमता की वृद्धि करना: ऊर्जा, पर्यावरण और जल परिषद (Council on Energy, Environment and Waters- CEEW) के 'इंप्लीकेशंस ऑफ ए नेट-ज़ीरो टारगेट फॉर इंडियाज़ सेक्टोरल एनर्जी ट्रांजिशन एंड क्लाइमेट पॉलिसी' अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार भारत की कुल स्थापित सौर ऊर्जा क्षमता को वर्ष 2070 तक नेट ज़ीरो लक्ष्य प्राप्त करने के लिये 5,600 गीगावाट से अधिक की आवश्यकता होगी।
    - भारत को वर्ष 2070 तक शुद्ध शून्य लक्ष्य हासिल करने के लिये विशेष रूप से बिजली उत्पादन हेतु कोयले के उपयोग को वर्ष 2060 तक 99% तक कम करना होगा।
    - सभी क्षेत्रों में कच्चे तेल की खपत को वर्ष 2050 तक चरम स्थिति पर पहुँचाने और वर्ष 2050 तथा वर्ष 2070 के बीच 90% तक कम करने की आवश्यकता होगी।
        - ग्रीन हाइड्रोजन औद्योगिक क्षेत्र की कुल ऊर्जा आवश्यकता का 19% योगदान कर सकता है।
- भारत का ऊर्जा भविष्य उसके लोगों की विकासात्मक आवश्यकताओं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से उनकी सुरक्षा द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिये।
    - ऊर्जा क्षेत्र में भारत के प्रयास इस बात के प्रमाण हैं कि जलवायु कार्रवाई के संबंध में भारत अपनी क्षमता से अधिक बढ़कर कार्य कर रहा है।
- यद्यपि भारत ग्लोबल वार्मिंग पर नियंत्रण के लिये अपना उपयुक्त योगदान कर रहा है, यह विकसित देशों के लिये भारत के प्रयासों का लाभ उठाने का अवसर नहीं होना चाहिये।
    - यह आवश्यक है कि भारत के कार्बन स्पेस की उचित हिस्सेदारी और इसके परिणामस्वरूप इसके लोगों के ऊर्जा भविष्य को अभी ही समय रहते सुरक्षित कर लिया जाए।

नोट :

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन पर अंतर-सरकारी पैनल (Intergovernmental Panel on Climate Change) की नवीनतम रिपोर्ट द्वारा संकलित आँकड़ों के मुताबिक, जिन देशों ने शुद्ध शून्य उत्सर्जन के लिये प्रतिज्ञा प्रकट की है, उनसे यह घोषित करने के लिये कहा जाना चाहिये कि वे इस लक्ष्य तक पहुँचने से पहले कितने शेष कार्बन बजट का उपभोग करेंगे।

इस प्रश्न का उत्तर यह निर्धारित करने के लिये महत्त्वपूर्ण है कि विश्व किस दिशा में आगे बढ़ रहा है। इस वैश्विक संदर्भ में, भविष्य के लिये हमारे ऊर्जा पथ को सावधानी से तैयार किया जाना चाहिये जहाँ पर्याप्त लचीलेपन का अवसर हो, जबकि हमारी निर्धनतम और सबसे कमज़ोर आबादी के हितों को केंद्र में रखते हुए कोई भी प्रतिज्ञा ली जानी चाहिये।

जलवायु लक्ष्य और परिवहन उत्सर्जन

संदर्भ

'ग्लासगो' में जारी शिखर सम्मेलन के बीच सर्वप्रमुख देशों की अपने व्यक्तिगत लक्ष्यों से परे देखने की असमर्थता से यह पता चलता है कि वर्तमान समय में विश्व के सबसे बड़े संकटों में से एक—जलवायु परिवर्तन के विषय में इतनी कम प्रगति क्यों हुई है।

'आइस-कैप्स' (Ice Caps) का पिघलना, बाढ़ और जानमाल की क्षति एक सामान्य परिदृश्य ही बन गया है और अरबों डॉलर की प्रतिबद्धताओं एवं तकनीकी नवाचारों के बावजूद इस दिशा में कोई महत्त्वपूर्ण प्रगति नहीं हुई है।

परिवहन क्षेत्र, जो कि सबसे बड़े वैश्विक कार्बन उत्सर्जक क्षेत्रों में से एक है, के उत्सर्जन को कम करने के लिये कोई विशेष प्रतिबद्धता ज़ाहिर नहीं की गई है।

मध्य शताब्दी तक परिवहन क्षेत्र के 'डीकार्बोनाइज़ेशन' के लिये एक समग्र और एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता होगी। स्वच्छ सड़क परिवहन के निर्माण के लिये प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना आवश्यक है, लेकिन इसे अन्य हस्तक्षेपों के साथ संयुक्त किया जाना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है।

वैश्विक उत्सर्जन और परिवहन क्षेत्र

- बढ़ते तापमान का संकट: वैश्विक तापमान वृद्धि को 1.5 डिग्री सेल्सियस से नीचे सीमित रखने और वर्ष 2050 तक कार्बन तटस्थता प्राप्त कर लेने के पेरिस समझौते के लक्ष्य सहित बेहद बुनियादी उद्देश्यों की पूर्ति भी वर्तमान में पहुँच से बाहर ही नज़र आती है।
  - संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने चेतावनी दी है कि छह वर्ष पहले पेरिस समझौते के तहत किये गए वादे की पूर्ति होती नहीं दिख रही और पृथ्वी 2.7 डिग्री सेल्सियस तापमान के 'विनाशकारी मार्ग' पर आगे बढ़ रही है।
- परिवहन क्षेत्र से वैश्विक उत्सर्जन: परिवहन क्षेत्र कुल उत्सर्जन में एक चौथाई भाग का योगदान करता है, जिसमें से सड़क परिवहन उत्सर्जन के तीन-चौथाई भाग (और कुल वैश्विक CO_2 उत्सर्जन के 15%) के लिये ज़िम्मेदार है।
  - इनमें सबसे बड़ी हिस्सेदारी सवारी वाहनों की है जो लगभग 45% CO_2 का उत्सर्जन करते हैं।
  - यदि यही स्थिति बनी रहती है तो वर्ष 2050 में वार्षिक GHG उत्सर्जन वर्ष 2020 की तुलना में 90% अधिक होगा।
- भारत-विशिष्ट उत्सर्जन: भारत का परिवहन क्षेत्र देश के GHG उत्सर्जन में 12% का योगदान करता है, जिसमें रेलवे का योगदान लगभग 4% है। वर्ष 1990 के बाद से इन उत्सर्जनों में तीन गुना से अधिक की वृद्धि हुई है।
  - नवीनतम आकलनों के अनुसार, परिवहन क्षेत्र सर्वाधिक तेज़ी से आगे बढ़ते उत्सर्जकों में से एक है।
  - 'ग्लोबल कार्बन प्रोजेक्ट' (एक निजी संगठन) की रिपोर्ट के अनुसार, भारत का कार्बन उत्सर्जन वर्ष 2018 में वैश्विक वृद्धि की तुलना में दो गुना से अधिक तेज़ी से आगे बढ़ा।
- भारत की कुछ नवीनतम पहलें:
  - अगस्त, 2021 में परिवहन क्षेत्र की डीकार्बोनाइजिंग के लिये एक सुसंगत रणनीति विकसित करने हेतु 'NDC-TIA' प्रोजेक्ट के एक अंग के रूप में 'फोरम फॉर डीकार्बोनाइजिंग ट्रांसपोर्ट' को लॉन्च किया गया है।
  - भारतीय रेलवे ने भी घोषणा की कि वह वर्ष 2030 तक विश्व का पहला 'शुद्ध-शून्य' कार्बन उत्सर्जक बन जाने का लक्ष्य रखता है।

- नेशनल इलेक्ट्रिक मोबिलिटी मिशन प्लान के एक भाग के रूप में फेम-इंडिया योजना शुरू की गई है जिसका मुख्य ज़ोर सब्सिडी उपलब्ध कराने के माध्यम से इलेक्ट्रिक वाहनों को प्रोत्साहित करने पर है।
- PLI योजना के तहत, उन्नत सेल केमिस्ट्री बैटरी स्टोरेज निर्माण के विकास के लिये लगभग 18,000 करोड़ रुपए स्वीकृत किये गए हैं।
  - इन प्रोत्साहनों का उद्देश्य इलेक्ट्रिक वाहनों (EVs) के स्वदेशी विकास को प्रोत्साहित करना है, ताकि उनकी आरंभिक लागत को कम किया जा सके।

संबद्ध चुनौतियाँ

- ऑटोमोबाइल उद्योग के सबसे बड़े उत्सर्जकों की ओर से प्रतिबद्धता का अभाव: विश्व के सबसे बड़े कार बाज़ारों और वाहन निर्माताओं (फॉक्सवैगन, बीएमडब्ल्यू, टोयोटा मोटर) की COP26 जलवायु शिखर सम्मेलन में जताई गई उत्सर्जन प्रतिबद्धता से संबद्ध होने की संभावना नज़र नहीं आ रही क्योंकि उनकी संबंधित सरकारें स्वयं इसके प्रति अनिच्छुक हैं।
  - दस सबसे बड़े ऑटोमोबाइल समूहों में से सात के पास वर्ष 2035 से पहले ऐसा करने की कोई योजना तक मौजूद नहीं है।
  - ग्रीनपीस (एक गैर-सरकारी संगठन) के अनुसार, प्रतिबद्धताओं और कार्रवाइयों के एक विस्तृत मूल्यांकन से पता चलता है कि वाहन निर्माता कंपनियाँ (जो बाज़ार के 80% का प्रतिनिधित्व करती हैं) इस दिशा में पर्याप्त कार्य नहीं कर रहे हैं।
- सरकारों द्वारा जवाबदेही की कमी: दुनिया के तीन सबसे बड़े ऑटोमोबाइल बाज़ारों—अमेरिका, चीन और जापान, की सरकारों ने कोई प्रतिज्ञा नहीं की है।
  - हालाँकि, भारत (विश्व का चौथा सबसे बड़ा ऑटो बाज़ार) ब्रिटेन, कनाडा, नीदरलैंड, नॉर्वे, पोलैंड और स्वीडन के साथ गठबंधन में शामिल हुआ है।
  - इन प्रतिबद्धताओं से परहेज करने वाले ये तीन देश विश्व में जीवाश्म ईंधन दहन से होने वाले CO_2 उत्सर्जन में 50% का योगदान करते हैं।
- उत्सर्जन की अंडर-रिपोर्टिंग: कई देश संयुक्त राष्ट्र के समक्ष अपने ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन की अंडर-रिपोर्टिंग करते हैं।
  - यह अंतराल कम-से-कम 8.5 बिलियन टन से लेकर 13.3 बिलियन टन प्रति वर्ष तक का होता है जो ग्रह के तापमान पर व्यापक प्रभाव डालने के लिये पर्याप्त है।
  - इससे संकेत मिलता है कि समस्या का सही ढंग से मूल्यांकन तक नहीं किया जा रहा, और विश्व एक बदलते (या यहाँ तक कि पथभ्रष्ट) लक्ष्य का पीछा करने के निरंतर संकट का सामना कर रहा है जो अब तक हो चुकी क्षति को कम करने में कोई योगदान ही नहीं कर सकेगा।

आगे की राह

- सड़क परिवहन की डीकार्बोनाइजिंग: ग्रीनपीस के अनुसार, लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये वर्ष 2050 तक सड़क परिवहन को पूरी तरह से डीकार्बोनाइज़ करने की ज़रूरत है।
  - यहाँ तक पहुँचने के लिये कंपनियों को अगले दशक में आंतरिक दहन इंजन वाहनों को चरणबद्ध तरीके से समाप्त कर लेना होगा।
- नीति-निर्माताओं को वित्तीय सहायता: नीति-निर्माताओं का एक छोटा समूह तात्कालिक समस्याओं के लिये एक केंद्रित समाधान की तलाश में है। जो इस दिशा में प्रगति कर रहे हैं, उन्हें पर्याप्त धन प्राप्त नहीं हो रहा, न ही उन पर पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है।
  - व्यापक या समग्र लक्ष्यों का समय अब बीत चुका है और अब आवश्यकता उन प्रकट परिणामों और लक्ष्यों की है, जो उन्हें वित्तपोषित करने के एक सुपरिभाषित तरीके के साथ विशिष्ट समस्याओं को संबोधित करें।
  - सार्वजनिक पूँजी को निजी धन को प्राथमिकता क्षेत्रों की ओर निर्देशित करना चाहिये।
- EVs का विकल्प: इसके साथ ही, इलेक्ट्रिक वाहनों (EVs) के निर्माण और प्रचलन की राह में मौजूद समस्याओं पर विचार करना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है।
  - लागत, प्रौद्योगिकी, व्यापक पैमाने पर विनिर्माण या मुनाफा— वाहन निर्माताओं के समक्ष जो भी समस्या हो, उसका बेहतर नियंत्रण करना उपयुक्त आरंभिक कदम होगा।

- भारत के पास अपने शहरी परिवहन क्षेत्र को कार्बन मुक्त करने का एक बड़ा अवसर मौजूद है। मोटर वाहनों के इलेक्ट्रिक संस्करण के साथ-साथ पैदल यात्रा, साइकलिंग और सार्वजनिक परिवहन को बढ़ावा देना देश के लिये उपयुक्त रणनीति साबित हो सकती है।
  - पूरे भारत में इलेक्ट्रिक वाहनों को सफल एवं कारगर बनाने तथा इसका लाभ उठाने के लिये विभिन्न हितधारकों हेतु एक अनुकूल पारितंत्र बनाने की आवश्यकता होगी।
- परिवहन नीतियों के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव लाना: परिवहन नीतियों के निर्माण के लिये एक परिदृश्य आधारित मॉडलिंग दृष्टिकोण महत्त्वपूर्ण होगा। इस तरह के मॉडलिंग के माध्यम से सरकार यह आकलन कर सकती है कि 'वन-साइज़-फिट्स-ऑल' नीति निर्णय लागू करने के बजाय परिदृश्यों की एक व्यवहार्य श्रृंखला के माध्यम से GHG उत्सर्जन में किस प्रकार कमी लाई जाए।
  - ऐसे साधनों और परिदृश्य निर्माण अभ्यासों का उपयोग कर एक ऐसा ढाँचा विकसित किया जा सकता है जो न केवल नीति निर्माताओं को व्यापक आँकड़े प्रदान करेगा, बल्कि विभिन्न नीति विकल्पों का परीक्षण करने और भविष्य के प्रभाव का अनुमान कर सकने की भी अनुमति देगा। इससे फिर देश को इष्टतम विकल्प का चयन कर सकने का अवसर प्राप्त होगा।

दृष्टि The Vision

सामाजिक न्याय

नशीली दवाओं के दुरुपयोग के विरुद्ध नीतिगत कार्रवाई

संदर्भ

केंद्रीय सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय ने 'नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट- 1985' (Narcotic Drugs and Psychotropic Substances (NDPS) Act, 1985) के कुछ प्रावधानों में संशोधनों का प्रस्ताव किया है। बॉलीवुड एक्टर शाहरुख खान के बेटे आर्यन खान की हालिया गिरफ्तारी सहित कुछ हाई-प्रोफाइल ड्रग मामलों की पृष्ठभूमि में ये अनुशंसाएँ अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो गई हैं।

मंत्रालय की अनुशंसाओं में व्यक्तिगत उपयोग के उद्देश्यों से कम मात्रा में मादक पदार्थ रखने के मामलों को अपराध-मुक्त किया जाना शामिल है। एक अन्य सुझाव यह है कि कम मात्रा में नशीले पदार्थों का उपयोग करने वाले व्यक्तियों को 'पीड़ित' के रूप में देखा जाए।

हालाँकि, भारत में व्यापक रूप से नशीली दवाओं के दुरुपयोग के अंतर्निहित कारणों को समझने और फिर व्यापक कार्रवाई करने की आवश्यकता है।

भारत में नशीली दवाओं की लत के कारण

- सामाजिक आर्थिक स्थिति: निम्न आय, बेरोज़गारी, आय असमानता, निम्न शैक्षिक स्तर, उन्नति के सीमित अवसर और स्वास्थ्य सेवाओं की कमी।
- सामाजिक पूँजी: निम्न सामाजिक समर्थन और अल्प सामुदायिक भागीदारी।
- पर्यावरणीय घटनाएँ: प्राकृतिक आपदाएँ, युद्ध, संघर्ष, जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण क्षरण और प्रवास।
- सामाजिक परिवर्तन जो आय में परिवर्तन, शहरीकरण और पर्यावरण क्षरण से संबद्ध हैं।
- 'स्ट्रेस बस्टर': कभी-कभी छात्र अपनी पढ़ाई या काम के दबाव के कारण ड्रग्स की ओर अग्रसर हो जाते हैं। इसके साथ ही, दूसरे राज्यों से आने वाले छात्र मुंबई, दिल्ली जैसे महानगरों में रह सकने के संघर्ष को कठिन पाते हैं।
  - आमतौर पर ऐसा देखा जाता है कि कोई बेरोज़गार युवक हताशा में आकर नशा करने लग जाता है।
- सहकर्मी दबाव और अन्य मनोवैज्ञानिक कारक किशोरों को जोखिम भरे व्यवहारों में संलग्न कर सकते हैं, जिससे फिर वे मादक द्रव्यों के सेवन की ओर अग्रसर होते हैं।
  - ड्रग्स के सेवन से संबद्ध एक काल्पनिक 'ग्लैमर' के कारण भी युवा इसकी ओर आकर्षित हो सकते हैं।
  - कभी-कभी मौज-मस्ती या महज़ आजमा कर देखने के कारण भी युवा ड्रग्स लेने के आदी हो जाते हैं।
- पीड़ा और अभाव: निम्न आय वर्ग के लोग, जिनके पास पर्याप्त मात्रा में भोजन जुटा सकने की भी क्षमता नहीं होती, नींद या आराम के लिये ड्रग्स का सहारा लेने लगते हैं।
- कानूनी व्यवस्था की खामियाँ:
  - ड्रग्स संकट के पीछे ड्रग कार्टेल, क्राइम सिंडिकेट और अंततः पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी ISI का हाथ है, जो भारत में ड्रग्स का सबसे बड़ा आपूर्तिकर्त्ता है।
    - देश में रेव पार्टियों के आयोजन की खबरें आती रहती हैं, जहाँ नशीले पदार्थों का सेवन मुख्य आकर्षण होता है।
    - इन पार्टियों का संचालन ड्रग सिंडिकेट द्वारा किया जाता है, जिनके अपने निहित स्वार्थ होते हैं।
    - ऐसी पार्टियों के आयोजन में सोशल मीडिया अहम भूमिका निभाती है।
    - पुलिस ऐसी पार्टियों पर नियंत्रण कर सकने में असफल रही है।
  - पड़ोसी देशों के साथ सीमा साझा करने वाले पंजाब, असम और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों के माध्यम से ड्रग्स की तस्करी की जाती है।

नोट :

- ◆ नूडल्स, पान मसाला और गुटखा जैसे उत्पादों के साथ ड्रग्स का मिश्रण कर इन्हें स्कूल और कॉलेज के छात्रों को बेचा जाता है।
- ◆ देश में ड्रग्स लाने के लिये अफ्रीका के साथ ही दक्षिण एशिया के मार्ग का दुरुपयोग किया जा रहा है।

नशीली दवाओं की लत के प्रभाव

- चोटों, दुर्घटनाओं, घरेलू हिंसा की घटनाओं, चिकित्सा समस्याओं और मृत्यु का उच्च जोखिम।
- इससे देश की आर्थिक क्षमता पर भी प्रभाव पड़ता है, क्योंकि युवा नशीली दवाओं के दुरुपयोग में लिप्त होते हैं और इसकी हानि जनसांख्यिकीय लाभांश को उठानी पड़ती है।
- साथ ही ड्रग्स के कारण परिवार के साथ और दोस्तों के साथ संबंध प्रभावित होते हैं, जिससे भावनात्मक और सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।
- पुलिस पेट्रोलिंग और पुनर्वास केंद्रों के लिये अतिरिक्त धन और संसाधन प्रदान किये जाने से वित्तीय बोझ बढ़ जाता है।
- नशीली दवाओं का दुरुपयोग हमारी स्वास्थ्य, सुरक्षा, शांति और विकास को गंभीर रूप से प्रभावित करता है।
  - ◆ हेपेटाइटिस बी एवं सी और टीबी जैसे रोगों में वृद्धि होती है।
- नशीली दवाओं पर निर्भरता, आत्मसम्मान में कमी, निराशा आदि के कारण आपराधिक कृत्यों और यहाँ तक कि आत्महत्या की प्रवृत्ति में वृद्धि हो सकती है।

ड्रग संकट पर अंकुश लगाने संबंधित चुनौतियाँ

- कानूनी रूप से उपलब्ध नशीली दवाएँ: उदाहरण- तंबाकू, जो एक गंभीर समस्या उत्पन्न करता है और जिसे आमतौर पर 'गेटवे ड्रग' के रूप में देखा जाता है और महज़ आज़मा कर देखने के नाम पर बच्चे भी इसका सेवन करते हैं।
- पुनर्वास केंद्रों की उपलब्धता का अभाव: भारत में पुनर्वास केंद्रों का अभाव है। इसके अलावा, देश में नशामुक्ति केंद्रों का संचालन करने वाले गैर-सरकारी संगठन भी आवश्यक प्रकार के उपचार और चिकित्सा प्रदान करने में विफल रहे हैं।
- ड्रग्स तस्करी: पड़ोसी देशों के साथ सीमा साझा करने वाले पंजाब, असम और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों के माध्यम से ड्रग्स की तस्करी की जाती है।

नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस (NDPS) अधिनियम

- भारत 'यूएन सिंगल कन्वेंशन ऑन नारकोटिक्स ड्रग्स' (1961), 'कन्वेंशन ऑन साइकोट्रोपिक सब्सटेंस' (1971) और 'कन्वेंशन ऑन इलिसिट ट्रैफिक इन नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस' (1988) का हस्ताक्षरकर्त्ता है, जो चिकित्सीय और वैज्ञानिक उद्देश्यों के लिये नारकोटिक ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सब्सटेंस के उपयोग को सीमित करने के साथ-साथ उनके दुरुपयोग को रोकने के दोहरे उद्देश्य की प्राप्ति के लिये विभिन्न उपायों का निर्धारण करते हैं।
- देश में नारकोटिक्स के क्षेत्र में प्रशासनिक और विधायी व्यवस्था की स्थापना संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशनों की भावना के अनुरूप की गई है। इस संबंध में भारत सरकार का मूल विधायी साधन 'नारकोटिक्स ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस (NDPS) अधिनियम- 1985' है।
- यह अधिनियम नारकोटिक्स ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सब्सटेंस से संबंधित परिचालन के नियंत्रण एवं विनियमन के लिये कड़े प्रावधान करता है।
- यह नारकोटिक्स ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सब्सटेंस के अवैध व्यापार से प्राप्त या इसमें उपयोग की गई संपत्ति को ज़ब्त करने का भी प्रावधान करता है।
- यह कुछ मामलों में मौत की सजा का भी प्रावधान करता है, जहाँ कोई व्यक्ति बार-बार इस कृत्य में लिप्त पाया जाता है।

आगे की राह

- मादक द्रव्यों के सेवन संबंधी विकार से पीड़ित लोगों के लिये वैज्ञानिक साक्ष्य-आधारित उपचार पर्याप्त पैमाने पर उपलब्ध कराए जाने की आवश्यकता है।
- युवाओं की सुरक्षा के लिये 'साक्ष्य-आधारित पदार्थ उपयोग रोकथाम कार्यक्रमों' (Evidence-Based Substance Use Prevention Programmes) की आवश्यकता है।

नोट :

- रोकथाम कार्यक्रमों को न केवल मादक द्रव्यों के उपयोग को रोकने के उद्देश्य से जोखिम और सुरक्षात्मक कारकों को संबोधित करना चाहिये, बल्कि यह भी सुनिश्चित करना चाहिये कि युवा स्वस्थ वयस्कता प्राप्त कर सकें और उन्हें उनकी क्षमताओं को साकार कर सकने के लिये सबल किया जाए, ताकि वे अपने समुदाय और समाज के उत्पादक सदस्य बन सकें।

- नशीली दवा संबंधी समस्याओं को नियंत्रित करने में मदद के लिये एक अनुकूल कानूनी और नीतिगत वातावरण का निर्माण करने की आवश्यकता है।
  - यह महत्त्वपूर्ण है कि कानूनों और नीतियों का उद्देश्य मादक द्रव्यों के सेवन से प्रभावित लोगों को आपराधिक न्याय प्रणाली के अधीन करने के बजाय स्वास्थ्य और कल्याण सेवाएँ प्रदान की जाए।
  - ड्रग आपूर्ति नियंत्रण क्षेत्र के साथ-साथ ड्रग की मांग में कमी लाने और नुकसान को कम करने जैसे कार्य से संबद्ध संस्थाओं के बीच कुशल समन्वय की आवश्यकता है।
- वैज्ञानिक साक्ष्य सृजित करने और उपयोग करने का दृष्टिकोण जारी रहना चाहिये।
  - सभी प्रकार के आँकड़ों का उपयोग भारतीय समाज के स्वास्थ्य एवं कल्याण की रक्षा और प्रोत्साहन के लिये साक्ष्य-आधारित नीतियों और कार्यक्रमों को बढ़ावा देने हेतु किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष

कार्ययोजना का उद्देश्य, विशेष रूप से कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में बढ़ते खतरे का मुकाबला कर, व्यसन मुक्त भारत का निर्माण करना है। नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के विरुद्ध अधिक लक्षित अभियान की रूपरेखा तैयार करने की आवश्यकता है।

नशे अथवा ड्रग्स की लत को एक चरित्र दोष के रूप में नहीं देखा जाना चाहिये, बल्कि इसे एक बीमारी के रूप में देखा जाना चाहिये। इसलिये, नशीली दवाओं के सेवन से जुड़े कलंक को सामाजिक जागरूकता और स्वैच्छिक प्रक्रियाओं, जैसे मनोवैज्ञानिकों द्वारा चिकित्सा सहायता के साथ-साथ परिवार के मज़बूत समर्थन के माध्यम से कम करने की आवश्यकता है।

The Vision

आंतरिक सुरक्षा

भारत की पनडुब्बी क्षमता

चर्चा में क्यों?

विशेषज्ञों का कहना है कि भारत अपनी पनडुब्बियों के बेड़े के आधुनिकीकरण के मामले में पहले से ही एक दशक पीछे है, जबकि चीन अपनी बड़ी नौसेना और अति विशिष्ट पनडुब्बी क्षमताओं में आगे बढ़ गया है।

- प्रथम विश्व युद्ध (1914-18) के दौरान पनडुब्बी पहली बार नौसैनिक युद्ध में एक प्रमुख कारक बन गई, द्वितीय विश्व युद्ध (1939-45) में भी पनडुब्बियों ने बड़े पैमाने पर भूमिका निभाई।

प्रमुख बिंदु

- भारत में पनडुब्बियों की संख्या:
  - वर्तमान में भारत में 15 पारंपरिक डीज़ल-इलेक्ट्रिक पनडुब्बियाँ हैं, जिन्हें एसएसके (SSK) के रूप में वर्गीकृत किया गया है और एक परमाणु बैलिस्टिक पनडुब्बी है, जिसे एसएसबीएन (SSBN) के रूप में वर्गीकृत किया गया है। भारत की अधिकांश पनडुब्बियाँ 25 वर्ष से अधिक पुरानी हैं, जिनमें से कई का जीर्णोद्धार किया जा रहा है।
- पनडुब्बियों का वर्गीकरण:
- डीज़ल इलेक्ट्रिक पनडुब्बियाँ (SSK):
  - डीज़ल-इलेक्ट्रिक पनडुब्बियाँ परिचालन हेतु डीज़ल इंजनों द्वारा चार्ज की गई इलेक्ट्रिक मोटरों का उपयोग करती हैं। इन इंजनों को संचालित करने के लिये हवा और ईंधन की आवश्यकता होती है, इसलिये उन्हें बार-बार सतह पर आना पड़ता है, जिससे उनका पता लगाना आसान हो जाता है।
  - एसएसके पनडुब्बियों में से चार शिशुमार श्रेणी (Shishumar Class) की पनडुब्बियाँ हैं, जिन्हें वर्ष 1980 के दशक में जर्मनी के सहयोग से भारत लाया और बनाया गया।
  - किलो श्रेणी या सिंधुघोष श्रेणी की आठ पनडुब्बियाँ हैं, जिन्हें वर्ष 1984 और वर्ष 2000 के बीच रूस (पूर्व सोवियत संघ सहित) से खरीदा गया था।
  - तीन कलवरी श्रेणी की स्कॉर्पीन पनडुब्बी (P-75) हैं, जिसका निर्माण फ्राँस के नेवल ग्रुप के सहयोग से भारत के मझगांव डॉक पर किया गया है।
- परमाणु शक्ति आक्रामक पनडुब्बी (SSN):
  - SSN अनिश्चित काल तक समुद्र के भीतर रहकर कार्य कर सकते हैं; यह केवल चालक दल की सहनशक्ति या खाद्य आपूर्ति की कमी से प्रभावित हो सकती है। ये पनडुब्बियाँ टॉरपीडो, एंटी-शिप क्रूज़ मिसाइल और लैंड-अटैक क्रूज़ मिसाइल जैसे कई सामरिक हथियारों से भी लैस हैं।
  - भारत अमेरिका, ब्रिटेन, रूस, फ्राँस और चीन के साथ छह देशों में एसएसएन है।
  - भारत द्वारा आईएनएस चक्र 2 एसएसएन पनडुब्बी रूस से वर्ष 2022 तक लीज़ पर ली गई है।
- परमाणु शक्ति बैलिस्टिक मिसाइलयुक्त पनडुब्बी (SSBN):
  - यह एक धीमी गति से चलने वाला 'बॉम्बर' या बमबारी करने वाला यंत्र और परमाणु हथियारों के लिये एक गोपनीय 'लॉन्च प्लेटफॉर्म' है।
  - अरिहंत और निर्माणाधीन तीन एसएसबीएन सामरिक बल कमान (SFC) का हिस्सा हैं।

- भारत की आधुनिकीकरण योजना:
  - 30-वर्षीय योजना: वर्ष 1999 में सुरक्षा पर कैबिनेट समिति द्वारा अनुमोदित स्वदेशी पनडुब्बी निर्माण के लिये 30-वर्षीय योजना (2000-30) निर्मित की गई, जिसके तहत एक विदेशी मूल उपकरण निर्माता (OEM) के सहयोग से भारत में निर्मित दो उत्पादन श्रेणियों की छह पनडुब्बियों के निर्माण की परिकल्पना की गई थी।
    - इन परियोजनाओं को P-75 और P-75I के नाम से जाना जाता था।
    - यह अनुमान लगाया गया था कि भारत को 2012-15 तक 12 नई पनडुब्बियाँ मिल जाएंगी। इसके बाद भारत वर्ष 2030 तक अपने 12 बेड़े निर्मित करेगा, जिससे बेड़ों (Fleet) की संख्या 24 हो जाएगी तथा पुरानी पनडुब्बियों को सेवामुक्त कर दिया जाएगा।
    - लेकिन P-75 के अनुबंध पर फ्राँस की DCNS के साथ वर्ष 2005 में ही हस्ताक्षर किये गए थे। वर्तमान में यह अनुबंध नौसेना समूह के साथ किया गया है।
  - P-75: निर्माणाधीन छह पनडुब्बियों में से P-75 के तहत अब तक तीन कलवरी श्रेणी की स्कॉर्पीन पनडुब्बियों की डिलीवरी की गई है।
  - P-75I: अभी इसका संचालन शेष है; इस संबंध में प्रस्ताव जुलाई 2021 में जारी किया गया था।
    - यह स्ट्रैटेजिक पार्टनरशिप मॉडल के तहत भारत का पहली पनडुब्बी होगी, जिसे वर्ष 2015 में लाया गया था।
- भारतीय नौसेना निर्माण के लिये चुनौतियाँ:
  - चीन की नौसेना शक्ति:
    - इस तथ्य के बावजूद कि समुद्र ही एकमात्र ऐसा क्षेत्र है जिसमें भारत चीन को उसके प्राकृतिक भौगोलिक लाभों को देखते हुए रोक सकता है, भारतीय समुद्र के बेड़े में अपेक्षित क्षमता की कमी बनी हुई है।
    - चीन के पास पहले से ही 350 युद्धपोतों के साथ दुनिया की सबसे बड़ी नौसेना है, जिसमें 50 पारंपरिक और 10 परमाणु पनडुब्बी शामिल हैं।
  - आधुनिकीकरण में भारत की देरी:
    - उदाहरण: P-75 हेतु किये गए अनुबंध पर हस्ताक्षर करने में देरी।
  - भारतीय नौसेना की अनिवार्यताओं में कमी:
    - भारतीय नौसेना की अन्य महत्वपूर्ण कमियाँ हैं, जिनमें आवश्यक क्षमताएँ शामिल हैं, जैसे-"दुश्मन की पनडुब्बियों का पता लगाने हेतु उन्नत टोड ऐरे सोनार (ATAS), एवं उन्हें अप्रभावी करने के लिये भारी वज़न वाले टॉरपीडो और विभिन्न वायु रक्षा प्रणालियाँ, जो न केवल उनकी उत्तरजीविता हेतु बल्कि उनकी समग्र आक्रामक क्षमता हेतु भी महत्वपूर्ण हैं।
  - समझौता रद्द करना:
    - भारत ने असंबद्ध भ्रष्टाचार घोटाले के परिणामस्वरूप 'फिनमेकैनिका' की सहायक कंपनी WASS द्वारा निर्मित भारी वज़न वाले ब्लैक शार्क टॉरपीडो का एक सौदा रद्द कर दिया, जिसमें फिनमेकैनिका, ऑगस्टा-वेस्टलैंड की एक अन्य सहायक कंपनी शामिल थी।
  - AIP सिस्टम का धीमी गति से विकास:
    - वायु स्वतंत्र प्रणोदन (Air Independent Propulsion -AIP) प्रणाली पनडुब्बियों की गोपनीयता बनाए रखती है साथ ही लंबे समय तक पानी के भीतर रहने की अनुमति देती है।
    - हालाँकि रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन (DRDO) द्वारा स्वदेशी AIP प्रणाली के विकास में देरी हुई है।
  - नौसेना पर सरकार का कम ध्यान:
    - भारतीय बजट का अधिकांश हिस्सा सेना पर केंद्रित है, जिसमें वायु सेना दूसरे स्थान पर है और नौसेना तीसरे स्थान पर है।
    - नौसैनिक क्षमता निर्माण समयावधि के दौरान पूंजी-गहन साबित होने की समस्या भारत को अपनी नौसेना क्षमताओं के विकास की गति में वृद्धि से रोकता है, यहाँ तक कि चीन जैसे प्रतियोगी अधिक तेज़ी से आगे बढ़ते हैं।

आगे की राह

- जब तक नौसैनिक कौशल में अंतर को जल्दी से कम नहीं किया जाएगा, तब तक हिंद महासागर पर चीन के प्रभुत्व का मुकाबला करने में भारत की अक्षमता बनी रहेगी।
- अगर भारत को क्वाड (भारत, ऑस्ट्रेलिया, अमेरिका और जापान) और उसकी इंडो-पैसिफिक महत्त्वाकांक्षाओं पर बात करनी है, तो रक्षा क्षेत्र में आधुनिकीकरण की देरी को जल्दी से दूर करना चाहिये।
- भारत को अपनी संबंधित क्षमताओं में गिरावट को रोकने के लिये अपनी निर्णय लेने की प्रक्रियाओं और अपनी जटिल अधिग्रहण प्रक्रिया को बदलने की आवश्यकता है।

नोट :